आत्मशास्त्र

तटवर्ती वीर राघव राव

आत्मशास्त्र

तटवर्ती वीर राघव राव

भीमावरम – 534201.

Ph: 9440309812

Rs.200/-

परिचय

आत्मविद्या को आध्यात्मिक विद्या भी कहते हैं। यह मृत्यु को हमेशा के लिए दूर करने वाली विद्या है। जीवन और मरण से मुक्त करने वाली विद्या है। 'आत्मविद्या' सही विद्या है। मनुष्य को ठीक करने वाली विद्या है। नित्यानंद देने वाली विद्या है।

'विद्या' शब्द विद् नामक संस्कृत धातु से आया है। विद् का अर्थ 'जानना' है। 'विद्या' का अर्थ 'जानने लायक' है।

जानने लायक क्या है? हम सब उसे ढूंढ रहे हैं। कुछ भी जानें लेकिन हमारे दुख दूर नहीं हो रहे हैं। हमारा शोक दूर नहीं हो रहा है। हमारे कष्ट दूर नहीं हो रहे हैं। हमारे आंसू नहीं सूख रहे हैं। इसके पीछे का कारण यह है कि हमें जिसे जानना चाहिए वह हम नहीं जान रहे हैं। जिसे जानने से सर्व विषय पता लगेंगे, वह हम नहीं जान रहे हैं। उस विद्या का अभ्यास हम नहीं कर रहे हैं। उस विद्या का नाम 'आध्यात्मिक विद्या' है। इसी को 'आत्मविद्या' भी कहते हैं। 'आत्मविद्या' का अभ्यास करने से समस्त दुख दूर हो जाएंगे।

आध्यात्मिकता का अर्थ स्वभाव है। परमात्मा हर व्यक्ति में अंतर्यामी बनकर प्रकाशित होता है और 'आत्मा' के नाम से पुकारा जाता है। 'आत्मा' ही परमात्मा है, यह जानना आध्यात्मिकता है। 'आत्मा' तुम्हारा स्वरूप है। इसलिए कहा गया है कि "स्वरूपानु अनुसंधान मुक्ति या मोक्ष है"।

यह सब कुछ नया नहीं है। हम इसे जानते हैं लेकिन भूल गए हैं। हमारे द्वारा भूले गए इस विषय को फिर से याद दिलाना है। पूजा, भजन, प्रार्थना और जाप जैसे कार्य साधना द्वारा ज्ञान स्वरूप होने वाली 'आत्मा' का अनुभव नहीं होगा। आत्मा को केवल 'ध्यान साधना' द्वारा ही अनुभव किया जा सकता है।

मानव की दुख निवृत्ति का कारण होने वाले 'आत्मज्ञान' को प्राप्त करने के लिए 'आत्मशास्त्र' का अध्ययन करना आवश्यक है। 'आत्मा' की महानता जानना आवश्यक है। 'महान आत्मा' यानी भगवान के बारे में ज्ञान प्रदान करने वाली पुस्तक ही "आत्मशास्त्र" है।

आशा करता हूँ कि मुमुक्षु लोग इसका अध्ययन करके "ध्यान" द्वारा आत्मा का अनुभव प्राप्त करके धन्य होंगे। इस किताब को मुमुक्षु लोग ध्यान से पढ़िएगा।

- **तटवर्ति वीर राघव राव**

विषय सूची

1.	“क्या धन प्रधान है?”	5
2.	“इच्छाओं से क्षति!”	8
3.	“इच्छा - परिश्रम”	10
4.	“भोग नहीं योग मुख्य है!”	14
5.	“क्या मानव बुद्धिमान है?”	16
6.	“क्या तुम नाम हो?”	17
7.	“व्याकुलता”	18
8.	“मनोबल - आत्मविश्वास”	19
9.	“विद्या के दो प्रकार!”	21
10.	“नाटक!”	22
11.	“संसार पर व्यामोह!”	26
12.	“व्यर्थ नहीं - निर्माण करना है!”	28
13.	“धर्म - अधर्म”	31
14.	“प्रकृति के प्रति मानव का धर्म!”	33
15.	“यज्ञ ही मुक्ति का मार्ग है!”	37
16.	“मंदिर - ध्यान मंदिर!”	39
17.	“बड़ों के पास रिक्त हाथ नहीं जाना चाहिए!”	40
18.	“आत्म निवेदन”	42
19.	“सब वही है - सब कुछ उसी का है!”	44
20.	“नाम स्मरण क्या है?”	46
21.	“तीर्थ स्थान क्या है?”	47
22.	“जाप या ध्यान?”.	48
23.	“मानव का कर्तव्य!”	49
24.	“देह सौंदर्य - आत्म सौंदर्य”	51
25.	“ध्यान योगी लवण जैसा व्यक्ति है!”	53
26.	“भगवान के बारे में जानना चाहिए!”	54
27.	“हमारे साथ रहने वाले परम गुरु को पहचानना”	55

28. “भगवान!” 57
29. “जल - पत्थर!” 61
30. “पत्थर - आत्मा!” 62
31. “प्राण प्रतिष्ठा” 65
32. “भगवान पसंद हैं?” 69
33. “भक्तों के प्रकार!” 70
34. “विशेषताएं!” 74
35. “मूर्ति किसलिए है?” 75
36. “विग्रह आराधना के कारण?” 78
37. “परिवर्तनीय मान्यता से अधिक अपरिवर्तनीय सत्य पर ध्यान देना है!”..... 83
38. “भाव को नहीं, बल्कि सत्य को प्रमुखता देनी चाहिए!” 85
39. “आराधना मान्यता पर आधारित है - सत्य पर नहीं!”.............................. 87
40. “क्या भगवान केवल मान्यता पर आधारित होते हैं?”.............................. 92
41. “मान्यता या सत्य?” 95
42. “आत्म साक्षात्कार मार्ग के उपाय!”. 97
43. “भागवत दर्शन!” 100
44. “विश्व या विश्वनाथ?” 101
45. “पिता से प्रेम कीजिए, पिता की संपत्ति से नहीं!”.................................. 104
46. “सब एक है!” 106
47. मानव गगन से धरती पर आने वाला भगवान है!)....................................... 109
48. “हमें बेइज्जत कर दिया है”.. 112
49. “मानव के तुच्छ व्यवहार का कारण पत्थर को भगवान मानना है!”.......... 115
50. “हम इहलोक के निवासी हैं या परलोक के?”.. 119
51. “आत्म शांति”.. 126
52. “अमृत किसे मिलेगा?”.. 128
53. “असली मंदिर”.. 130

“क्या धन प्रधान है?”

साधारण रूप से मानव सुख चाहता है, दुख नहीं। लेकिन ध्यान देने पर समझ आएगा कि इच्छुक सुख का अनुभव नहीं कर पा रहा है। जिस दुख से पीछा छुड़ाना चाहता है, उसी का अनुभव कर रहा है। कितनी भी कोशिश करे, लेकिन मानव की इच्छा के विरुद्ध हो रहा है। मानव की शक्ति और युक्ति काम नहीं कर रही है।

इसका मुख्य कारण मानव का ठीक से विचार नहीं कर पाना है। मानव हमेशा धन के पीछे भागता है। धन प्राप्त करने से दुनिया के सारे सुख प्राप्त करने का विचार मानव के मन में है। मानव पैसे से अपने दुख को दूर करना चाहता है। मानव विश्वास करता है कि धन से हर चीज को हासिल कर सकता है। इसलिए मानव धन प्राप्ति पर अधिक ध्यान दे रहा है। मानव अपना अधिक समय धन पैदा करने के लिए खर्च कर रहा है। धन प्राप्त करने के लिए मानव अपनी शक्ति और युक्ति का उपयोग कर रहा है। धन के पीछे भागते हुए अपना सारा जीवन खर्च कर रहा है। लगभग सभी लोग इसी तरह अपना जीवन बिता रहे हैं।

लेकिन बहुत सारा धन प्राप्त करने के बाद और बहुत सारे सुखों को अपने जीवन में व्यवस्थित करने के बाद भी मानव दुख से दूर नहीं हो पा रहा है। जिसकी वजह से वह सुख का आनंद नहीं ले पा रहा है। खुद को बुद्धिमान मानने वाला मानव अपने दुख का निवारण नहीं कर पा रहा है। इसका मुख्य कारण ‘मानव को जो विचार करना चाहिए, उस विचार को नहीं करना है’। अगर मानव सुख से जीना चाहता है तो उसे ‘पाप और पुण्य’ के बारे में विचार करना है।

पाप-पुण्य के बारे में विचार किए बिना चाहे जितना भी धन कमा लो, आप सुख से नहीं जी पाएंगे। दुख का निवारण नहीं कर पाएंगे। इसलिए मुख्य रूप से ‘पाप और पुण्य’ के बारे में सोचना है क्योंकि पाप से ही दुख मिलता है। जब दुख मिलता है तो कितना भी धन प्राप्त कर लो... कितनी भी विलासिता प्राप्त कर लो... लेकिन मानव दुख में ही रहेगा, सुख का आनंद नहीं ले पाएगा और जीवन नर्क बन जाएगा। इसलिए पापी चीजों के बारे में जानना है। पाप क्यों नहीं करना चाहिए जानना है। जानना चाहिए कि पुण्य क्यों करना है।

तभी जीवन मानव की इच्छा के अनुसार होगा। इसके अलावा कितनी भी पूजा करने से या प्रार्थना करने से या भजन और नमाज करने से फायदा नहीं मिलेगा।

इसलिए मानव को मुख्य रूप से पाप और पुण्य के बारे में सोचना चाहिए, धन और संपत्ति के बारे में नहीं। बहुत सारा धन प्राप्त करने पर भी दुख नहीं जाएगा। इसलिए समझना है कि 'धन प्रधान नहीं है'।

कोई छोटी वस्तु खरीदने के लिए भी हम बहुत सोचते हैं। कई सारी दुकानें घूमकर, गुणवत्ता की जांच करके खरीदते हैं। लेकिन कर्म करते समय हम क्यों नहीं सोचते हैं? क्या बिना सोचे समझे कर्म करने पर हम दुख का शिकार नहीं बनेंगे?

पाप और पुण्य का अर्थ मानव द्वारा किए जाने वाले अच्छे और बुरे काम हैं। उन्हें हम कर्म भी कहते हैं। बुरे कर्म पाप हैं और अच्छे कर्म पुण्य हैं। बुरे कर्म का मतलब - दूसरों को हानि, क्षति, तकलीफ पहुंचाने वाले कार्य। अच्छे कर्म का मतलब - दूसरों को लाभ, सुख और आनंद देने वाले कार्य।

अच्छे कर्म क्यों पुण्य हैं? बुरे कर्म क्यों पाप है?

हम लोगों और जानवरों को अन्य या दूसरे या पराये समझते हैं, लेकिन हमें जानना है कि वह भी हमारे पसंदीदा, हमारे द्वारा प्रार्थना और पूजा किए जाने वाले भगवान हैं।

अन्नामाचार्य जी ने कहा है, "ब्रह्ममुककटे! परब्रह्ममोक्ककटे!", "कंदुवगु हीनाधिकमु लेंदुलेवु!" तथा "अंतरात्मा ही सबके लिए श्री हरि है"। ऊपर दिए गए वाक्यों का अर्थ यह है कि सृष्टि में हीन और उत्तम जैसा कुछ नहीं है। यानी सब समान है। सब एक है। क्योंकि सबके लिए श्री हरि यानी भगवान एक हैं, वह अंतरात्मा ही है। उन्होंने स्पष्ट रूप से बताया है कि सभी जीव, जंतु, मनुष्य और प्राणियों में मौजूद अंतरात्मा ही भगवान यानी श्री हरि है।

क्योंकि भगवान सर्वव्यापी और अंतर्यामी हैं ना! ऐसे भगवान की हिंसा करना पाप है। भगवान को आनंदित करना पुण्य है। इसलिए भगवान को आनंद देने वाले कर्म करके पुण्य प्राप्त करना चाहिए। हमें समझना है कि भगवान को दुख देने वाले कर्म से पाप मिलेगा।

हमें भगवान का अनुग्रह चाहिए। उनका अनुग्रह प्राप्त करने के लिए उन्हें आनंदित करना है। भगवान को आनंदित करने से भगवान हमें आनंदित करेंगे। भगवान की हिंसा करने से भगवान हमें सजा देंगे। इसलिए पाप और पुण्य के मामले में हमें विवेक का उपयोग करना है। सोच समझकर कर्म करना है। सबसे पहले हमें जानना है कि भगवान कौन हैं? कौन से कर्म से भगवान को आनंद मिलता है? यह

सब जाने बिना हम भगवान को आनंदित नहीं कर सकेंगे। हमें कैसे पता चलेगा कि कौन से काम भगवान को आनंद देते हैं?

अगर भगवान के बारे में मानव जान लेंगे तो इतने सारे पाप नहीं कर पाएंगे। इतने सारे दुखों का सामना नहीं करेंगे। जिस तरीके से जीना है, वैसे ही जिएंगे। क्योंकि भगवान समस्त मानवों और जानवरों में अंतर्यामी के रूप में मौजूद हैं। इसलिए उन्हें सर्वांतर्यामी कहते हैं। सर्व में अंतर्यामी बनकर रहने वाले को आनंदित करने के लिए सबका सम्मान करना चाहिए। सबकी सेवा करनी चाहिए। ध्यान द्वारा आत्मा पर यानी भगवान पर श्रद्धा रखनी चाहिए।

ध्यान करने से भगवान के बारे में हम जान पाएंगे। पाप नहीं करेंगे। अच्छे कर्म करेंगे। खुद को पाप कर्म रहित बनेंगे। दुख से बाहर निकलेंगे।

"जिसके प्रति श्रद्धा होगी, उसका ज्ञान प्राप्त होगा।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“इच्छाओं से क्षति!”

इच्छाओं को पूरा करने के लिए हम कर्म करते हैं। कर्म करने के बाद, उसका परिणाम देखते हैं यानी इच्छा पूरी हुई है या नहीं? इस पर पर्यवेक्षण करते हैं। इच्छा पूरी होने पर तात्कालिक अल्प संतोष प्राप्त करते हैं। इच्छा ना पूरी होने पर दुख प्राप्त करते हैं। सच में हमारे कितने दुख दूर हो रहे हैं? बहुत कम दुख दूर हो रहे हैं ना! यानी हम समझ सकते हैं कि इच्छाएं दुख का कारण बन रही हैं। यानी अधूरी इच्छाएं दुख पैदा करने वाली होती हैं ना?

कुछ लोग कहते हैं कि इच्छा होने से ही हम काम करते हैं। इच्छा के सहारे काम करना है, लेकिन काम पूरा होने के बाद इसे भूल जाना है। नहीं तो काम करने के लिए जितनी शक्ति खर्च करेंगे, उससे कई अधिक आलोचना शक्ति हमें उसके लिए खर्च करनी पड़ेगी जिसका परिणाम हमारे हाथ में नहीं है।

आलोचना शक्ति को व्यर्थ नहीं करना चाहिए। यही बीमारी का मूल कारण है। परिणाम के बारे में सोचने या ना सोचने से कुछ बदलेगा नहीं, क्योंकि परिणाम हमारे बस में नहीं होता है। अधिक विचार करके शक्ति खर्च करने से अच्छा है कि उस शक्ति का किसी दूसरे कार्य में उपयोग किया जाए। इसलिए हमारी शक्ति को अच्छे कार्य में उपयोग करना है। जो काम हमारे बस में हैं हमें केवल उसे करने पर श्रद्धा देनी चाहिए। इसलिए हमारी शक्ति को हमारे काम पर रखना है। कौन सा काम करना है? कैसा काम करना है? क्या काम करना है? कितना काम करना है? इस पर अपनी शक्ति को खर्च करना है।

इच्छाओं से केवल क्षति मिलती है। इसलिए अधिक इच्छाएं नहीं होनी चाहिए। ‘निष्काम कर्म’ करने चाहिए। ऐसा है तो मांगने वाला कौन है? हम क्यों इच्छाएं मांग रहे हैं? मांगने वाला मन है और विचार करने वाला भी मन है। ऐसे मन को ध्यान द्वारा नियंत्रण में रखना है। इच्छाओं का कारण होने वाला मन अगर नियंत्रण में होगा तो इच्छाएं भी नियंत्रित रहेंगी। इच्छाएं नियंत्रित होंगी तो दुख नहीं रहेगा और शक्ति व्यर्थ नहीं होगी। उस शक्ति को किसी दूसरे अच्छे काम पर उपयोग किया तो भविष्य में लाभ मिलेगा।

“धरती पर भगवान ने मनुष्य की जरूरतों के अनुसार चीजों को प्रदान किया है, मनुष्य की इच्छाओं के अनुसार नहीं।”

जरूरत से अधिक आशा करना या मांगना असमंजस देता है। एक की इच्छा दूसरे को दुख पहुंचाएगी। एक का लाभ दूसरे को क्षति पहुंचाएगा। इस सृष्टि में एक व्यक्ति की

क्षति हुए बिना दूसरे व्यक्ति को लाभ नहीं मिल सकता है। इसलिए लाभ प्राप्त करने की इच्छा रखकर, व्यर्थ की इच्छाओं से दूसरोंको क्षति और दुख नहीं देना चाहिए।

किसी एक का विनोद किसी दूसरे के लिए दुख नहीं होना चाहिए। दूसरे को तकलीफ दिए बिना विनोद लेना चाहिए। दूसरेके दुखसे विनोद प्राप्त करना अधर्म है।

एक मेज पर १०० चॉकलेट रखी हैं। वहाँ १०० लोग हैं। सबको एक-एक चॉकलेट लेने के लिए कहा गया। कुछ लोग २, कुछ लोग ५ लेते जाएंगे तो बाकी लोगों के लिए कुछ नहीं बचेगा। यहाँ दूसरों की चीजों को हमने छीन लिया है। यह अन्याय और अधर्म है। इसी तरह हम धरती पर व्यवहार कर रहे हैं। दूसरों के हक की चीज की आशा कर रहे हैं। जिस चीज को भगवान ने दूसरेके हक में रखा है, उसकी आशा कर रहे हैं।

धरती पर जो जितना अधिक इकट्ठा करेगा, वह उतना अधिक दूसरों से छीनने वाला होगा। इसलिए संपत्ति प्राप्त करके या अपनी इच्छाओं को पूरा करके गर्वित होने वाले लोग दूसरोंकी दीन स्थिति का कारण हैं।

इसलिए रमणा महर्षि और रामकृष्ण परमहंस जैसे योगियों ने केवल अपनी जरूरतों तक खुद को सीमित रखा। जरूरतों से अधिक आशा नहीं की। लेकिन भोगी होने वाले सामान्य मानव जरूरत से अधिक आशा करते हैं। इच्छाओं को पूरा करने के लिए गलतियाँ और पाप करते हैं। अधर्म व्यवहार करते हैं। सृष्टि धर्म के विरुद्ध होने की वजह से वह दुखका सामना करते हैं। इसलिए इच्छाएं नहीं माँगनी हैं। इच्छाओं का गुलाम नहीं बनना है।

अगर किसी के पास जरूरत से अधिक हो भी, तो ग्रहण करना है कि 'वह सबके लिए दिया गया है'। आपके पास जो है, उसे दूसरोंके साथ बांटना है। सबको देना है। यह सृष्टि धर्म है। इसका अतिक्रमण करके चीजों को अपने पास इकट्ठा करेंगे तो एक ना एक दिन सब कुछ खोना पड़ेगा। सृष्टि धर्म को ग्रहण करके बांटने से, वह व्यक्ति केवल परलोक में ही नहीं, बल्कि भूलोक में भी विकास करेगा। ध्यान करने से हर कोई ऐसे धर्मों के बारे में जान पाएगा और आचरण कर पाएगा। इतना ही नहीं, इच्छाएं भी नियंत्रण में रहेंगी।

“इच्छा - परिश्रम!”

संसार में हर कोई मांगने के पीछे पड़ा हुआ है। हर जगह इच्छा ही मांगने वाले दिखाई देते हैं, लेकिन मेहनत करने वाले बहुत कम दिखाई देते हैं। जो चाहिए, वह अपने मनपसंद भगवान से मांगते हैं।

कुछ लोग पूजा करके मांगते हैं, कुछ लोग प्रार्थना करके मांगते हैं। कुछ लोग नमाज पढ़कर मांगते हैं, कुछ लोग भजन करके मांगते हैं। हर जगह मांगना दिखाई देता है, लेकिन परिश्रम नहीं दिखाई देती है। छोटी सी छोटी जरूरत को पूरा करने के लिए और छोटी सी छोटी कठिनाई को दूर करने के लिए लोगों को भगवान से मांगने की आदत पड़ चुकी है। इसका मुख्य कारण है कि “मांगना आसान और मेहनत कठिन है।” मानव हमेशा आसान मार्ग ढूँढता है।

मांगना आसान है, लेकिन मांगने से सब कुछ नहीं मिलता है। मेहनत करने से ही सब कुछ हासिल होता है। इसलिए कहा गया है, “जो जितनी मेहनत करेगा, उसे उतना प्राप्त होगा महादेवा!” लेकिन कहीं नहीं कहा गया है कि “जो जितना मांगेगा उसे उतना मिलेगा महादेवा!” इस बात को समझे बिना, मानव मेहनत करने से अधिक मांगने को महत्त्व देता है। समझ नहीं आता कि दुनिया में इस सबकी शुरुआत किसने की है।

इस विषय के बारे में विवेक उपयोग करके सोचने से पता लगेगा। चलो एक उदाहरण सुनते हैं। एक छात्र हर रोज पूजा करके परीक्षा में उत्तीर्ण होने की इच्छा मांगता है। लेकिन पढ़ाई नहीं करता है, पढ़ने के लिए मेहनत नहीं करता है। दूसरा छात्र हर रोज पढ़ाई करता है, यानी मेहनत करता है। लेकिन पूजा नहीं करता है। दोनों में से कौन पास होगा? प्रश्न करने पर हम मेहनत करने वाले छात्र का नाम लेंगे।

इसी तरह, अच्छे संगीतकार बनने की इच्छा करते हुए प्रार्थना करने वाले को क्या संगीत की प्रवीणता प्राप्त होगी? या हर रोज संगीत साधना करते हुए मेहनत करने वाले को प्रवीणता प्राप्त होगी? हम विश्वास के साथ मेहनत करने वाले व्यक्ति का नाम लेंगे।

इसी तरह, क्रिकेट चैंपियन बनने के लिए पूजा और प्रार्थना करके मांगने वाला क्या चैंपियन बनेगा? या हर रोज मेहनत करते हुए अभ्यास करने वाला चैंपियन बनेगा? हम अवश्य मेहनत करने वाले का नाम लेंगे।

इसी तरह, किसी नदी को पार करने के लिए, किसी बड़े पहाड़ को पार करने के लिए, वहाँ पर एक भगवान की फोटो रखकर, उसकी पूजा करके "इस नदी को पार करा दो! इस पहाड़ को पार करा दो!" कहते हुए मांगने से क्या हमारी इच्छा पूरी होगी? नहीं ना! लेकिन प्रार्थना के बजाए प्रयत्न करने से हम अवश्य नदी या पहाड़ को पार कर पाएंगे!

इन सभी से पता चलता है कि, **"इच्छा नहीं, बल्कि मेहनत आवश्यक है।" हमें समझना है कि इसी तरह "पूजा नहीं, बल्कि प्रयत्न आवश्यक है।"** मेहनत को महत्त्व देना चाहिए। इसलिए कहा गया है कि, **"परिश्रम से लोग ऋषि बन सकते हैं"।** हर जगह मेहनत करने वालों की ही जीत होती है। बिना मेहनत किए केवल पूजा और प्रार्थना करने से कोई फायदा नहीं है।

इसी विषय को भगवद्गीता में श्री कृष्ण भगवान ने बताया है। उन्होंने **'निष्काम कर्म'** करने के लिए कहा है। यानी कोई भी काम करके उसके परिणाम की आशा नहीं करनी है। यानी इच्छा नहीं करनी है। उन्होंने मेहनत करने के लिए कहा है, पूजा करने के लिए नहीं।

श्री कृष्ण भगवान ने **'कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन!'** कहा है। यानी कर्म करने का तुम्हें अधिकार है, लेकिन परिणाम की आशा करने का तुम्हें अधिकार नहीं है!" स्पष्ट रूप से कृष्ण ने इस बात को बताया है। यानी उन्होंने स्पष्ट रूप से बताया है कि हमें मांगने का अधिकार नहीं है। सब लोग श्री कृष्ण को महान समझकर पूजा और आराधना करते हैं, लेकिन उनके द्वारा बताई गई बात को नहीं समझते हैं। ना ही आचरण करते हैं। मांगने के लिए मना करने के बावजूद लोग इच्छाओं को पूरा करने के लिए पूजा करते हैं। भगवान के द्वारा मना की गई बात को करने से क्या इच्छाएं पूरी होती हैं?

इस बात का जवाब भगवान और भगवान की सृष्टि के बारे में पता करने से मिलेगा। क्योंकि भगवान ने सृष्टि में एक व्यवस्था की है। वह यह है कि सृष्टि में भगवान ने सब कुछ रखा है, ऐसा कुछ नहीं है जो सृष्टि में ना हो। लेकिन उसे पाने की मेहनत करनी चाहिए। यही भगवान द्वारा की गई व्यवस्था है। मेहनत से प्राप्त करने की व्यवस्था भगवान ने की है।

मांगने से प्राप्त होने की व्यवस्था भगवान ने नहीं की है। विशेष रूप से भगवान नहीं देखते हैं कि किसने पूजा की है? किसने प्रार्थना की है? किसने नमाज पढ़ा है? किसने नारियल दिया है? किसने केला दिया है? नारियल के लिए कौन सी इच्छा पूरी करनी है? केले के लिए कौन सी इच्छा पूरी करनी है? यह सब देखकर भगवान हमारी इच्छाओं को 'सैंक्शन' नहीं करते हैं। इसकी जरूरत के बिना भगवान ने सृष्टि व्यवस्था की है। वह यह है कि, "जो जैसा करेगा वह वैसा प्राप्त करेगा" यानी जो जितने अच्छे कर्म करेगा वह उतना अच्छा फल प्राप्त करेगा!" यानी अच्छे कर्म वालों को अच्छा और बुरे कर्म वालों को बुरा प्राप्त होने की व्यवस्था भगवान ने की है।

दूसरों को कष्ट देने से कष्ट, क्षति देने से क्षति, हिंसा देने से हिंसा, आनंद देने से आनंद, शांति देने से शांति, लाभ देने से लाभ प्राप्त होने की व्यवस्था भगवान द्वारा की गई है। जीवन में हमें जो चाहिए उसे हमें करना है, व्यर्थ चीजें नहीं करनी है। इतना ही नहीं, थोड़ा करके अधिक प्राप्त नहीं कर सकते हैं। हम **'जो बीज बोयेंगे वही सीचेंगे'**। कम से कम हमें वर्तमान में तो मेहनत करनी चाहिए। पिछले जन्म में करनी चाहिए थी। पिछले जन्म या अतीत में किए गए कर्म को **"सौभाग्य"** कहते हैं क्योंकि इसकी मेहनत हमें दिखाई नहीं देती है। कुछ लोग इसे **"भगवान की दया"** भी कहते हैं।

भगवान के द्वारा की गई व्यवस्था ए.टी.एम जैसी है। ए.टी.एम. में बैंक का मैनेजर, क्लर्क या केशियर नहीं होता है। फिर भी, चौबीस घंटे कोई भी आकर, कार्ड उपयोग करके अपनी हैसियत के अनुसार पैसे ले सकता है। इसमें हमारे द्वारा पहले डाले गए पैसों के अनुसार ही पैसे निकलते हैं। यानी ₹५००० डालने पर केवल ₹५००० बाहर आते हैं। इससे एक रुपया भी अधिक नहीं आएगा। यानी ₹५००१ नहीं

आएगा। हर हाल में हमारी हैसियत के अनुसार ही पैसे आएंगे। बैंक में डाले बिना, हैसियत के बिना, अगर आप जाकर ए.टी.एम की पूजा करेंगे तो एक रुपया भी बाहर नहीं आएगा।

नारियल तोड़ने से या प्रार्थना करने से ₹1 भी बाहर नहीं आएगा। इसी तरह, मंदिर में नारियल तोड़ने से, केले देने से, प्रसाद चढ़ाने से, कष्ट दूर करने के लिए गिड़गिड़ाकर भीख मांगने से कोई फायदा नहीं होगा। यह खुद करके देखने पर समझ आएगा।

यहाँ पर श्रद्धा लगाकर सोचिए! बिना किसी की मदद के ए.टी.एम. में खुद से पैसे निकालने की व्यवस्था है। आपको क्या लगता है भगवान ने सृष्टि में ऐसी व्यवस्था नहीं की होगी? अवश्य की होगी। लेकिन इसे हम पहचान नहीं पा रहे हैं। मेहनत किए बिना मांगते जा रहे हैं। लेकिन मांगने से मिलने की व्यवस्था सृष्टि में नहीं है। इसलिए पूजा, प्रार्थना, नमाज, भजन करते हुए मांगने से हमें कुछ प्राप्त नहीं हो रहा है। अगर किसी को कुछ प्राप्त होता भी है, तो वह उसके पूर्व जन्म में किए हुए कर्मों का फल है। इसलिए जानिए कि मनुष्य के ए.टी.एम. से कुछ प्राप्त होने के लिए उसमें हमें पहले से कुछ डालना होता है। इसी तरह, "भगवान की सृष्टि से कुछ प्राप्त करने के लिए हमें अच्छे कर्म करने चाहिए।"

मनुष्य ने छोटा सा ए.टी.एम. बनाया है, लेकिन भगवान के द्वारा बनाया गया ए.टी.एम. मानव की सोच से भी अधिक बड़ा है। इसलिए हर एक को जानना चाहिए कि **'पूजा नहीं, प्रयत्न करना चाहिए। प्रार्थना नहीं, साधना करनी चाहिए। मांगना नहीं, मेहनत करनी चाहिए।'** तभी मानव किसी चीज को हासिल कर पाएगा।

पूजा और प्रार्थना मांगने के तरीके हैं। लेकिन 'ध्यान साधना' मेहनत है। इसलिए मेहनत करके 'ध्यान साधना' कीजिए। योग्यता प्राप्त कीजिए। बिना मांगे सब कुछ प्राप्त कीजिए। आनंदमय जीवन बिताइए।

"अपने पास कुछ नहीं होने पर भी दूसरों की मदद करना ही साहस है!"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

"भोग नहीं, योग मुख्य है!"

दुनिया में प्राप्त होने वाले तात्कालिक आनंद को "भोग" कहते हैं। परलोक में प्राप्त होने वाले शाश्वत आनंद को "योग" कहते हैं। भोग थोड़े समय के लिए है, लेकिन योग शाश्वत है। कितने भी भोग का आनंद लेने पर भी वह योग की तुलना कम होंगे। भोगी महान नहीं है। योगी महान है। श्री कृष्ण भगवान ने अर्जुन को योगी बनने के लिए कहा, भोगी बनने के लिए नहीं। इसलिए अपने भोग को देखकर आनंद महसूस करने वाला मूर्ख है। योगी बनने के लिए कोशिश करने वाला ज्ञानी है।

भोग अनेक प्रकार के होते हैं। धन-धान्य समृद्धि होना भोग है। खेत और बगीचों की समृद्धि, ऐश्वर्य, सुख होना भोग है। अच्छी नौकरी और अच्छा कारोबार होना भोग है। नाम और शोहरत होना भोग है। लोगों में इज्जत और कीर्ति होना भोग है। सब लोगों का तुम्हारी इज्जत करना और तुम्हारी बात मानना भोग है। स्त्री और पुरुष के द्वारा आनंद प्राप्त होना भोग है। लेकिन यह सब भोग तात्कालिक हैं। यह सब सिर्फ आनंद लेते समय तक अच्छे लगते हैं, बाद में आनंद अदृश्य हो जाता है। बार-बार भोग का आनंद लेने को मन चाहता है। जीवन भर भोग का आनंद लेने पर भी हमारा मन खुश नहीं होता है। अगले जन्म में भी आनंद चाहता है। ऐसे बहुत सारे जीवन बीतने पर भी हमारा मन संतुष्ट नहीं होता है।

भोग का दास बनने वाला, भोग के दूर होने को सहन नहीं कर पाता है। उसे बार-बार चाहता है। उसके लिए प्रयत्न करता है। इस प्रयत्न में धर्म का मार्ग छोड़ देता है। अधर्म का रास्ता चुनता है। सत्य को नहीं पहचानता। अंत में बर्बाद हो जाता है। दुखी हो जाता है। इसलिए हमें समझना है कि "भोग से अधिक योग" मुख्य है। योगी बनने का प्रयत्न करना है।

योग में प्रगति प्राप्त करने के लिए कुछ विषय पर श्रद्धा होनी चाहिए। मुख्य रूप से भोग के पीछे भागने वाले, योग में प्रगति नहीं प्राप्त कर सकते हैं। अगर ऐसा कोई व्यक्ति प्रगति प्राप्त भी करता है तो भोग पाने की इच्छा उसे वापस योग से दूर कर देती है और उसका पतन हो जाता है। इसलिए योग मार्ग में प्रगति प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले को मुख्य रूप से तीन विषयों के बारे में सावधान रहना चाहिए। वह हैं, "कीर्ति, कांता (सुंदर स्त्री) और कनक (स्वर्ण)"। इन तीन चीजों के बारे में सावधान ना रहने पर योग मार्ग में सफलता और प्रगति प्राप्त करने के बाद भी वापस अधर्म के

रास्ते में जाकर पतन हो जाएगा। शाश्वत आनंद को प्राप्त नहीं कर पाएंगे। योग साम्राज्य तक नहीं पहुंच पाएंगे।

मुख्य रूप से बहुत सारे लोग धन के प्रति आकर्षित होते हैं। धन के लिए प्रलोभन का शिकार होकर पाप करते हैं। अपने योग मार्ग पर कांटे बिछा लेते हैं। अंत में पतन हो जाता है। अगर कोई धन के प्रलोभन से बचकर निकलता भी है तो स्त्री प्रलोभन में फंस जाता है। अपनी निर्बलता पर काबू नहीं पा सकता है। स्त्री के प्रति आकर्षित होकर गलतियाँ करता है। ऐसे लोग योग मार्ग में प्रगति प्राप्त करने पर भी आखिर में अधर्म के रास्ते पर चले जाते हैं। उन्हें पता भी नहीं चलता है कि किस चीज की वजह से वह बर्बाद हो गए हैं।

इन दोनों प्रलोभन से बचकर निकलने वाले लोग कीर्तिं नामक भोग के दास बन जाते हैं। यानी सबके द्वारा प्रशंसा और सम्मान प्राप्त करने के लिए इच्छुक होते हैं। सबसे ऊंचा दर्जा पाने के लिए इच्छुक होते हैं। सबसे ऊंचे स्थान पर रहने के लिए इच्छुक होते हैं। चाहते हैं कि सब लोग उनकी पूजा करें। इसके लिए वह लोग सत्य को भूल जाते हैं और अधर्म के मार्ग पर चले जाते हैं। हमेशा दूसरों की प्रशंसा के लिए भाषण देते हैं। धैर्य से निडर होकर सत्य कहने की और बदलाव लाने की, लोगों को सत्य मार्ग में लाने की कोशिश नहीं करते हैं।

दूसरों को जो अच्छा लगता है, उसी मार्ग की बोधना कराते हुए अपने कीर्तिं भोग का आनंद लेते रहते हैं। अधिक से अधिक लोगों तक अपने कीर्तिं पहुंचाने की कोशिश करते हैं। लेकिन उन लोगों को सत्य मार्ग और धर्म मार्ग में लाने की कोशिश नहीं करते हैं। लोगों को जितना भी क्षति हो जाए, लेकिन वे अपने कीर्तिं भोग पर श्रद्धा देते हैं। अपने शिष्य और भक्तों से भोग प्राप्त करते हुए आनंद में रहते हैं। सबसे अधिक खुद को उत्तम समझते हुए अंदर ही अंदर घमंड से खुश होते हैं। आखिर में अहंकार वाले व्यक्ति बन जाते हैं। ऐसे लोग चाहे योग मार्ग में कितना भी आगे बढ़ जाएं, लेकिन एक ना एक दिन बर्बाद हो जाएंगे।

हर व्यक्ति को ग्रहण करना है कि, "तात्कालिक भोग नहीं, शाश्वत योग" प्राप्त करना है। 'योग' महान है। इसलिए प्रशंसा की इच्छा नहीं रखनी चाहिए। धन के दास नहीं बनना है। स्त्री पुरुष के व्यामोह में नहीं फंसना है। 'योग' का आश्रय लेना है। 'योगी' बनना है, जिसके लिए ध्यान, स्वाध्याय, सज्जन संगति आवश्यक है। आचार्य संगति भी आवश्यक है। ध्यान मार्ग में बहुत मेहनत करनी पड़ेगी। ध्यान को कभी नहीं छोड़ना है।

“क्या मानव बुद्धिमान है?”

आमतौर पर, मानव अपने आविष्कार को देखकर खुद को बुद्धिमान समझता है। इतना ही नहीं, 84 लाख जीवों के बीच खुद को उच्च मानता है। किसी अन्य जीव द्वारा प्राप्त नहीं की गई चीजों को प्राप्त करने वाला महान समझता है। साधारण व्यक्ति से लेकर वैज्ञानिक तक सब लोग खुद को बुद्धिमान समझते हुए खुश होते रहते हैं।

इतनी सारी चीजों को प्राप्त करने पर भी सृष्टि में शाश्वत चीज कौन सी है? जान नहीं पा रहे हैं। सब कुछ प्राप्त होने जैसा लगता है। लेकिन अंत में सब अदृश्य हो जाता है। लोग नहीं जानते हैं कि आखिर में वह भी अदृश्य हो जाएंगे। इस मोह-माया को लोग ग्रहण नहीं कर पा रहे हैं। इन सब चीजों को ग्रहण नहीं कर पाने वाला मानव बुद्धिमान है क्या?

मानव की बुद्धिमत्ता माया को संभाल नहीं पा रही है। ऊपर से मानव अपने आविष्कारों को लेकर अहंकार में झूल रहा है। कितना विचित्र है ना। मानव को सच नहीं पता है, फिर भी अंधकार में है। सत्य को न जानने वाला, माया को महान समझने वाला, बुद्धिमान कैसे हो सकता है? सारी चीजों को प्राप्त करके इकट्ठा करके अहंकार से जीने वाला बुद्धिमान कैसे हो सकता है? अदृश्य होने वाली चीजों के पीछे भागने वाला, उनके लिए अपने जीवन का समय व्यर्थ करने वाला, उनको प्राप्त करने में असफल होने पर दुखी होने वाला बुद्धिमान कैसे हो सकता है? वह बुद्धिमत्ता कैसे हो सकती है?

“जो जैसा है, उसे वैसा मानने वाला बुद्धिमान है।” इसके अलावा, “जो नहीं है, उसे होने जैसा मानने वाला बुद्धिहीन है।” इस सत्य को ध्यान करने वाले योगी ही जान पाएंगे। असलियत में वही बुद्धिमान लोग हैं। वह मौजूद चीजों को ही महत्त्व देते हैं। मौजूद ना होने वाली चीजों के पीछे अपना जीवन व्यर्थ नहीं करते हैं। ‘ध्यान’ करके प्राप्त करने वाली चीजों को वह महत्त्व देते हैं। ध्यान करके अपना जीवन धन्य बनाते हैं। इसलिए ध्यान करके अपने जीवन को धन्य बनाएं। अपनी बुद्धि का प्रदर्शन कीजिए।

“क्या तुम नाम हो?”

तुम कौन हो? सब लोग अपना नाम बताते हुए जवाब देंगे। नाम लेकर गाली देने पर दुखी होंगे। नाम लेकर तारीफ करने पर या नाम अखबार में छपने से लोग खुश हो जाते हैं। लोग अपने ‘नाम’ को ‘स्वयं’ समझते हैं। असल में क्या तुम नाम हो? सोचो।

पहले तुम पैदा हुए। बाद में तुम्हारा नाम रखा गया। यानी नाम पैदा नहीं हुआ, बल्कि नाम रखा गया! लेकिन तुम अपने ‘नाम’ को ‘स्वयं’ समझ रहे हो। जब नाम तुम नहीं हो तो, उसको इतना महत्त्व क्यों दे रहे हो? जो नाम तुम नहीं हो उसके लिए तुम क्यों इतना उत्तेजित हो रहे हो? इतनी चिंता तुम्हें क्यों है?

क्या तुम्हारा नाम शाश्वत है? नहीं, वह केवल इस जन्म के लिए तुम्हें दिया गया है। इस जन्म में एक नाम और अगले जन्म में दूसरा नाम। तुम्हारा असली नाम कौन सा है? एक जन्म में प्रशंसा मिलती है तो दूसरे जन्म में विमर्श मिलता है। ऐसे में तुम क्या हो? यह सब तुम्हारा नहीं है। इसलिए नाम के बारे में मत सोचो। स्वयं के बारे में सोचो। तुम खुद को भूल चुके हो। सबसे पहले तुम स्वयं के बारे में जान लो। अपने आप का उद्धार कर लो। नाम के पीछे मत भागो। अपने विकास के बारे में सोचो।

याद रखो! तुम देह नहीं हो। तुम देह के अंदर हो। देह में कौन है? आत्मा। यानी तुम आत्मा हो। जब आत्मा तुम हो, तो तुम देह कैसे हो सकते हो? उस देह को दिया गया नाम तुम्हारा कैसे हो सकता है? इसलिए हमेशा याद रखने वाला विषय यह है कि, “मैं देह नहीं हूँ, मैं केवल आत्मा हूँ।” इसलिए तुम्हें स्वयं के बारे में ख्याल रखना है, नाम के बारे में नहीं।

स्वयं के बारे में ख्याल करने के लिए ध्यान करना है। केवल ध्यान ही तुम्हारे लिए उचित है। वही तुम्हारा विकास करेगा।

"व्याकुलता"

मानव के अंदर मन और आत्मा दोनों हैं। इसलिए व्याकुलता दो प्रकार की है : 1) मानसिक व्याकुलता, 2) आत्मिक व्याकुलता

1) **मानसिक व्याकुलता** - मनचाही चीज ना मिलने पर मन व्याकुल होता है। ऐसे समय में मन अपनी इच्छा को पूरा करने के लिए गलतियाँ करता है। पाप करता है। इसलिए मानसिक व्याकुलता से लड़ रहे लोग पाप करते हैं। मन सांसारिक चीजें चाहता है क्योंकि मन देह से संबंधित है। देह के साथ होता है। देह के साथ आता है और देह के साथ जाता है।

२) आत्मिक व्याकुलता - पाप करने से आत्मिक व्याख्याता मिलती है। आत्मा की चाही चीजें नहीं करने पर आत्मिक व्याकुलता होती है। आत्मा के विकास से संबंधित चीजें ना करने पर आत्मिक व्याकुलता होती है। आत्मा परलोक लाभ को महत्त्व देती है।

इच्छा पूरी ना होने पर मन व्याकुल होता है। अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए मन के द्वारा किए गए पाप आत्मिक व्याकुलता देते हैं। मन अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए गलतियाँ करता है।

"गलती नहीं करोगे तो मन व्याकुल होता है। गलती करने से आत्मा व्याकुल होती है।"

ये दो प्रकार की व्याकुलता मनुष्य के लिए हानिकारक हैं। मानसिक व्याकुलता का कारण इच्छाएं हैं। इच्छा यानी मन को काबू करने से यानी ध्यान द्वारा मानसिक व्याकुलता दूर होती है। लोग पाप और गलतियाँ नहीं करेंगे। इसलिए दोनों प्रकार की व्याकुलता से छुटकारा पाने के लिए 'ध्यान' सबसे अच्छा समाधान है।

"ध्यान सबको मित्र बना देता है!"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“मनोबल - आत्मबल”

मनोबल और आत्मबल अलग-अलग हैं। जो मन से संबंधित हो उसे धैर्य (धीरता) कहते हैं। जो आत्मा से संबंधित हो उसे स्थिर कहते हैं। मनोबल से अधिक आत्मबल महान है।

हमारे आहार, परिवार के वातावरण, माता-पिता के पालन पोषण, समाज, परिसर के अनुसार हमारा मन व्यवहार करता है। उनका प्रभाव मन पर होता है। लेकिन आत्मा का अस्तित्व ध्यान पर निर्भर होता है। सामान्य जीवन और संसार से संबंधित सोच रखने वाले लोगों में मन प्रमुख पात्र निभाता है। इसलिए कहा जाता है कि, “उसके पास अधिक मनोबल है”। लेकिन योगियों में आत्मबल अधिक होता है।

कोई काम करने से डरने वाला, कदम पीछे हटाने वाला कायर कहलाता है। डरपोक कहलाता है। निडर होकर, आगे बढ़कर काम पूरा करने वाले को धैर्यवान कहते हैं। धैर्यवान को हर जगह धैर्य के साथ रहना है। कुछ बार धैर्य प्रदर्शित करने वाला और कुछ बार डरने वाला क्या भगवान हो सकता है?

बहुत सारे लोग व्यर्थ चीजों में धैर्य प्रदर्शित करते हैं। आवश्यक चीजों को करने से डरते हैं। साधारण रूप से किसी क्रूर जंतु का सामना करने से, या किसी विष वाले जंतु की हत्या करने से, शक्तिशाली लोगों का सामना करने से, नई जगह धैर्य से बात करने से, आपत्तिजनक परिस्थिति में साहसी कार्य करने से, स्वयं के प्राण के बारे में सोचे बिना दूसरों की मदद करने से लोग धैर्यवान कहलाते हैं। मनोबल वाले कहलाते हैं।

इसी तरह, बिना सोचे समझे आगे वालों से लड़ाई करना, गाली देना, धैर्य नहीं आवेश कहलाता है।

कुछ लोग गलतफहमी में रहते हैं कि ऐसा करना धैर्य का काम है। कुछ लोग लड़ाई झगड़े तो हिम्मत के साथ करते हैं लेकिन छोटी-छोटी बात पर दुखी हो जाते हैं। सच्चा धैर्यवान किसी भी विषय में दुखी नहीं होता है।

कितना भी धैर्यवान हो, सत्य बोलने का अवसर आने पर डरता है। सारा धैर्य पानी में बह जाता है। इसलिए हमेशा सत्य कहने वाला धैर्यवान होता है। 'दूसरे क्या समझेंगे?' ना सोचने वाला धैर्यवान है। स्वतंत्र रूप से जीवन बिताने वाला धैर्यवान है। अपने पास हो या ना हो, लेकिन दूसरों की मदद करने वाला... दूसरों को देने वाला धैर्यवान है। करीबी इंसान की मृत्यु सहने वाला भी धैर्यवान है। कष्ट आने पर चिंता नहीं करने वाला धैर्यवान है। कैंसर का ट्यूमर आने पर भी रमणा महर्षि की तरह ध्यान नहीं देने वाला धैर्यवान है। क्रॉस डालने पर भी जीसस की तरह मुस्कुराने वाला धैर्यवान है। यह सब आत्मबल वाले लोग प्रदर्शित कर सकते हैं। बिना वस्त्र के महावीर बनकर सबके बीच घूमने वाला धैर्यवान है। इन सबको आत्मबल रखने वाला व्यक्ति प्रदर्शित कर पाएगा, लेकिन मनोबल रखने वाला नहीं। मनोबल से केवल कुछ कार्य कर सकते हैं। लेकिन आत्मबल से सब कुछ हासिल कर सकते हैं।

ध्यान द्वारा आत्मबल का विकासन करने वाले निडर होकर हर परिस्थिति का सामना कर सकते हैं। जीवन में कठिनाई आने पर दुखी नहीं होते हैं। हार और जीत की माया में नहीं पड़ते हैं। साधारण व्यवहार करते हैं। गलतियाँ और पाप नहीं करते हैं। कठिनाइयों का सामना करते हैं। किसी पर निर्भर नहीं होते हैं। किसी की प्रार्थना नहीं करते हैं।

मनोबल रखने वाला वीर युद्ध पर जाने से पहले अपने मनपसंद भगवान से प्रार्थना करता है। लेकिन आत्मबल रखने वाला किसी की प्रार्थना नहीं करता है। वह सबका सामना अपनी आत्मशक्ति से करता है। वह भोग के बारे में नहीं सोचता है। सबका उपकार करता है। इसलिए हमें जानना है कि मनोबल से आत्मबल महान है।

आत्मबल 'ध्यान' द्वारा प्राप्त होता है। इसलिए सब ध्यान कीजिए। आत्मबल का विकास कीजिए। महान मनुष्य बनिए।

“विद्या के दो प्रकार!”

इस दुनिया में मानव विद्या को अधिक महत्त्व देते हैं। सब लोग अपने बच्चों को विद्वान बनाना चाहते हैं। इतना ही नहीं, अपने बच्चों को विद्वान बनाने के लिए बहुत मेहनत करते हैं और पैसा भी खर्च करते हैं। वर्तमान काल में माता-पिता अपनी अधिक से अधिक कमाई को बच्चों की पढ़ाई के लिए खर्च कर रहे हैं। माता-पिता अपनी शक्ति युक्ति को भी अपने बच्चों की पढ़ाई पर खर्च कर रहे हैं। वर्तमान काल में विद्या का बहुत महत्त्व है।

माता-पिता को विद्या के दो प्रकार के बारे में नहीं पता है। उन्हें नहीं पता कि बच्चों को दो प्रकार की विद्या की जरूरत होती है। हमेशा माता-पिता अपने बच्चों को अच्छे से पढ़ाकर, उन्हें पैसा कमाने वाले बनाना चाहते हैं। ताकि उनके बच्चे आनंद से जीवन बिता पाएं। लेकिन वे नहीं जानते हैं कि पैसा कमाने से और सुख की व्यवस्था करने से दुख दूर नहीं होता है। दुख से जीवन में आनंद प्राप्त नहीं कर सकते हैं। माता-पिता नहीं जानते हैं कि धन देने वाली विद्या के साथ-साथ दुख का निवारण करने वाली विद्या आवश्यक है। इसलिए सभी को विद्या के दो प्रकार जानने चाहिए। वह हैं:

(1) अक्षय विद्या - अक्षय विद्या अविनाशी है। इसे “आध्यात्मिक विद्या और परा विद्या या आत्म विद्या” कहते हैं।

(2) क्षय विद्या - क्षय विद्या यानी नाश होने वाली विद्या। इसे “प्रापंचिक विद्या या अपर या देह विद्या” भी कहते हैं।

अक्षय विद्या अदृश्य से संबंधित विद्या है, जो परलोक ज्ञान प्रदान करती है, बंध विमुक्त करती है। लेकिन क्षय विद्या दृश्य इह से संबंधित है। इहलोक के धन को प्रदान करने वाली विद्या भुक्ति और सुख देती है। संबंध देती है।

अक्षय विद्या अच्छी है, आनंद देती है, जबकि क्षय विद्या दुख देती है।

अक्षय विद्या शाश्वत और परोक्ष विद्या है। आत्मा से संबंधित है। जबकि क्षय विद्या तात्कालिक है और भौतिक से संबंधित है।

योगी अक्षय विद्या का अभ्यास करते हैं। यह अज्ञान को दूर करती है। इसलिए अक्षय विद्या को निवृत्ति विद्या कहते हैं। भोगी क्षय विद्या का अभ्यास करते हैं। क्षय विद्या से अज्ञान दूर नहीं होता है। इसलिए क्षय विद्या को प्रवृत्ति विद्या कहते हैं। इसलिए मनुष्य के लिए अक्षय विद्या ही उपयुक्त है।

जो भी हो, सुख वाले जीवन से अधिक, दुख ना होने वाला जीवन ही महान है। क्योंकि जितने भी सुख हों, लेकिन दुख होंगे तो सुख का आनंद नहीं ले पाएंगे। दुख ना होने वाले, थोड़े बहुत सुख से भी खुश हो जाते हैं। इसलिए सुख प्रदान करने वाली "क्षय विद्या" के साथ-साथ दुख दूर करने वाली "अक्षय विद्या" को भी महत्त्व दीजिए और आनंद प्राप्त कीजिए।

"अक्षय विद्या" भगवान से संबंधित है। "क्षय विद्या" भगवान की सृष्टि से संबंधित है। भगवान से संबंधित 'अक्षय विद्या' पर ध्यान करना, योगियों की पुस्तकें पढ़ना, सत्य कहने वाले लोगों के साथ साहचर्य करना है। अक्षय विद्या को सीखने के लिए कोई उम्र नहीं है। बचपन से "अक्षय विद्या" को सीखने वाले भागवत साक्षात्कार प्राप्त कर सकते हैं और अंत में मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।

"हर कार्य के पीछे एक कारण होता है!"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

"नाटक!"

शेक्सपियर ने कहा है, "यह सारी दुनिया नाटक क्षेत्र है, जिसमें हम सब पात्रधारी हैं। हम अपने पात्र को निभाकर, अंत में निस्तार करते हैं।"

यानी धरती एक बड़ा नाटक क्षेत्र है। उसमें हम सब केवल पात्रधारी हैं। हम सब अपने अपने पात्र निभाकर आखिर में निस्तार कर देंगे - यही शेक्सपियर का अर्थ है। सच में, हम निस्तार कर देंगे।

धरती पर कोई भी ग्रहण नहीं कर रहा है कि वह केवल एक पात्र निभा रहा है। लोग इस नाटक को सच समझ बैठे हैं। मैं इस कुल का, इस धर्म का, इस देश का, इस प्रांत का हूँ, कह रहे हैं। कुछ लोग खुद को जमींदार, नायक, खूबसूरत, स्त्री, पुरुष, गरीब, कुरूप, पति, पत्नी, माता, पिता समझ रहे हैं और उसके अनुसार व्यवहार कर रहे हैं। लेकिन कोई नहीं सोच रहा है कि इस नाटक में वह कौन सा और क्या पात्र निभा रहा है?

क्योंकि धनवान विश्वास कर रहा है कि वह धनवान है, लेकिन वह यह नहीं जानता है कि वह केवल धनवान का पात्र निभा रहा है। इसलिए गर्व और अहंकार महसूस कर रहा है। लोग बहस कर रहे हैं कि "मैं इस धर्म का हूँ, उस धर्म का हूँ" लेकिन वे नहीं जानते हैं कि वह केवल उस धर्म वाला होने का पात्र निभा रहे हैं। इसलिए दूसरे धर्म वालों को दूषित कर रहे हैं और उन्हें अछूत इंसानों की तरह देख रहे हैं। लोग खुद को पुरुष समझ रहे हैं लेकिन वे नहीं जानते कि वे केवल एक पुरुष का पात्र निभा रहे हैं। उस अहंकार से बेचारी महिला पर अत्याचार कर रहे हैं। इसी तरह, स्त्री खुद को सुंदर समझ रही है, लेकिन उसे नहीं पता कि वह केवल स्त्री का पात्र निभा रही है। इसलिए खुद को अबला समझकर खामोश है। सब कुछ सह रही है। खुद को बलहीन समझ रही है।

इसी तरह, खुद को माता, पिता, पति, पत्नी, समझते हुए सब लोग अपने अपने पात्र निभा रहे हैं। लेकिन वे नहीं जानते हैं कि वे केवल पात्र हैं, जिसकी वजह से एक दूसरे से द्वेष करते हुए, पाप करते हुए कष्ट का सामना कर रहे हैं।

लोग अपने पात्र को शाश्वत समझ रहे हैं, लेकिन ऐसा नहीं है। शाश्वत समझते हुए धन और संपत्ति इकट्ठा कर रहे हैं, ताकि सुख प्राप्त कर सकें, लेकिन उन्हें

नहीं पता है कि अंत में उन्हें कष्ट का सामना करना पड़ेगा। ऐसा करने वाले बहुत सारे लोग कष्ट का सामना कर रहे हैं।

परिवार के लोगों को अपना समझते हुए, उनके दूर होने से दुखी होते हुए... लोग बहुत सारी कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं। लेकिन पात्रधारी होने के बारे में कोई नहीं सोच रहा है। पात्र खत्म होने के बाद सबको निस्तारण करना पड़ेगा।

नाटक का राजा अगर अपने आपको सचमुच का राजा समझने लगेगा तो क्या होगा? नाटक का जमींदार खुद को असली जमींदार समझने लगेगा तो क्या होगा? नाटक का कलेक्टर या मिनिस्टर खुद को सचमुच के कलेक्टर और मिनिस्टर मानने लगेंगे तो क्या होगा? इसी तरह भूलोक एक नाटक क्षेत्र है जहाँ मानव पात्रधारी है। मनुष्य नाटक के पात्र को असली समझ बैठे हैं। जिस तरह नाटक चलने तक राजा का पात्र चलेगा और उसके बाद खत्म हो जाएगा, वैसे ही मनुष्य का पात्र भी है। नाटक के बाद जमींदार, कलेक्टर का पात्र भी पूरा हो जाएगा। ठीक इसी तरह, पति, पत्नी और बच्चों का पात्र भी खत्म हो जाएगा।

गौर करने पर समझ आएगा कि एक नाटक में मिलने वाला पात्र और दूसरे नाटक में मिलने वाला पात्र अलग-अलग होते हैं। एक नाटक में राजा का पात्र करने वाले को दूसरे नाटक में सेवक का पात्र करना पड़ सकता है। इसी तरह, धनवान का पात्र करने वाले को दूसरे नाटक में अधिकारी का पात्र करना पड़ता है। एक नाटक में पत्नी का पात्र करने वाली को दूसरे में माता का पात्र निभाना पड़ता है। यानी नाटक बदलने पर पात्र भी बदलते हैं। कोई भी पात्र शाश्वत नहीं है। हर नाटक में समान पात्र नहीं मिलते हैं। इसी तरह, धरती पर भी हम सब लोगों के पात्र शाश्वत नहीं हैं। वर्तमान में जैसे हैं, भविष्य में वैसे नहीं रहेंगे। जिसके पास जो है, वह शाश्वत नहीं है। वह केवल पात्र के चलने तक रहेंगे। पात्र के खत्म होने या बदलने के बाद सब खत्म हो जाएंगे या बदल जाएंगे।

इसलिए पत्री जी ने कहा है, "पात्र को निभाओ, लेकिन भूलो नहीं कि वह केवल एक पात्र है"।

यानी देखने वाले को ऐसा लगना चाहिए कि हम पात्र में लीन हो चुके हैं, लेकिन पात्र में लीन नहीं होना चाहिए। क्योंकि हम केवल नाटक का पात्र निभा रहे हैं। यानी पति, पत्नी, बेटे आदि के रूप में तुम अपने पास रखो, निभाओ, लेकिन कभी भूलो मत कि तुम केवल एक पात्र निभा रहे हो।

जब हम अपने दिमाग में याद रखेंगे कि हम केवल एक पात्र निभा रहे हैं, तब हमें कोई भी दुख और दर्द नहीं होगा। जीवन में हमारा कोई अपना व्यक्ति, जैसे कि पति, पत्नी या बेटा दूर होने पर हमें दुख नहीं होगा। क्योंकि हम जानते हैं कि वह केवल एक पात्र है और उनका पात्र खत्म हो चुका है। पात्र को सब समझ बैठने वाला हमेशा दुख में डूबा रहेगा। अपने जीवन को व्यर्थ समझेगा। अपने को खोने के बाद खुद भी जीना नहीं चाहेगा। कुछ बार आत्महत्या करने का प्रयत्न करता है।

नाटक करने से हम जीवन में कर्म बद्ध नहीं बनेंगे। कर्म में नहीं फंसेंगे। पात्र को पात्र मानकर अपना पात्र निभाने से दुख नहीं होगा। पात्र को सच्चाई मानकर जीने से कर्म के बंदी बन जाएंगे। इसलिए गीता में श्री कृष्ण भगवान ने "कर्तृत्व भाव के बिना कार्य करने को कहा है" यानी "मैं कर रहा हूँ" भाव को दिमाग में रखे बिना कार्य करना है।

याद रखिए, **"नाटक में पिता की मृत्यु हो गई है, लेकिन असली पिता की नहीं। इसी तरह मनुष्य की मृत्यु नाटक में हो रही है, असलियत में नहीं।"** जो सत्य है।

नाटक में पत्नी के आने से व्यक्ति पति बनता है। बहन के आने से भाई बनता है। बेटे के आने से बाप बनता है। पोते के आने से दादा बनता है। अगर ऐसा है तो इन सभी में से हम कौन हैं? कोई नहीं हैं। यह सब केवल पात्र हैं, तुम तुम हो।

इसी तरह, श्री राम ने अपने नाटक का पात्र निभाया है। यानी नाटक में केवल पात्र उनका है, लेकिन वह नहीं हैं। पात्र और असली व्यक्ति में अंतर होता है। हम लोगों ने श्री राम के पात्र को मान लिया है और श्री राम की असलियत को छोड़ दिया है।

याद रखिए, हम सब भूलोक नामक नाटक क्षेत्र में तरह-तरह के पात्र निभा रहे हैं। वर्तमान में जो है वह भी पात्र है। यह सब जानने के लिए ध्यान करना आवश्यक है।

“संसार पर व्यामोह!”

मानव ने सब कुछ व्यवस्थित और तैयार किया है, तैयार की हुई वस्तु मानव के पास होती है। लेकिन मानव के बच्चे उसके पास नहीं होते हैं। थोड़े दिन बाद दूर हो जाते हैं। हमेशा के लिए भी दूर हो सकते है। क्योंकि मानव के बच्चे उसके स्वयं द्वारा निर्मित नहीं हैं। जिसे आपने निर्मित नहीं किया है, वह आपके अपने कैसे होंगे? आपके अपने नहीं हैं, तो आपको उन पर ममता कैसी? आपने अपने बच्चों को केवल देह प्रधान किया है। आपके बच्चे अपने कार्य को पूरा करने के लिए अपने कर्मों के साथ आए हैं। ऐसे लोग आपके अपने कैसे हो सकते हैं? आपके बच्चे अपना ख्याल रख सकते हैं। अपने बारे में सोचते हैं, अपने माता-पिता के बारे में नहीं। केवल शरीर प्रदान करने के लिए माता पिता पर थोड़ा प्यार जताते हैं। इसलिए बच्चों को वस्तु के रूप में नहीं देखना चाहिए। अपना नहीं कहना चाहिए। उन्हें अपना समझकर ममता बढ़ाने वाले लोग अंत में दुख का शिकार बनेंगे।

आपको भूलना नहीं चाहिए कि “आपके बच्चे भी आप जैसी आत्मा हैं।” सृष्टि क्रम में अपना पात्र निभाने के लिए आपके बच्चे आए हैं। वह अपना पात्र निभाकर निस्तारण करके चले जाएंगे। अगर आप उन्हें वस्तु मानकर अपने पास रखना चाहते हैं तो वह संभव नहीं है। इसलिए आपके बच्चों पर अधिक ध्यान नहीं देना चाहिए। स्वयं के बारे में सोचिए।

मानव अपने बाद आने वाली पीढ़ी के बारे में सोच रहा है, मेहनत कर रहा है। लेकिन अपने आने वाले जीवन के बारे में नहीं सोच रहा है, मेहनत नहीं कर रहा है।

सांसारिक व्यामोह नहीं, मोक्ष का व्यामोह होना चाहिए। संसार के लिए नहीं, बल्कि मोक्ष के लिए मेहनत करनी चाहिए। तभी दुख निवृत्ति मिलती है।

संसार के लिए मेहनत करने से दुख बढ़ेगा, मोक्ष के लिए मेहनत करने से दुख निवृत्ति होगी।

इसलिए मोक्ष मार्ग को ढूंढना चाहिए। मोक्ष के लिए मेहनत करनी चाहिए। सांसारिक व्यामोह में नहीं फंसना चाहिए। योग मार्ग ही मोक्ष मार्ग है। वही ध्यान है।

हाथी का दांत बहुत कीमती है। उससे कई सारी कीमती वस्तुएं बना सकते हैं। लेकिन मानव का दांत व्यर्थ है। उसे फेंकना पड़ता है। बाघ की खाल आसन के रूप में उपयोग की जाती है। जानवरों की खाल चप्पल और अनेक वस्तुएं बनाने के लिए उपयोग की जाती है। लेकिन मानव की त्वचा किसी चीज के लिए उपयोग नहीं की जाती है। जानवर और कुत्तों के बाल वस्त्र तैयार करने के लिए और चटाई तैयार करने के लिए उपयोग किए जाते हैं। लेकिन मानव के बाल किसी के लिए उपयोग नहीं किए जाते हैं।

गेहूँ को मशीन में डालने से गेहूँ का आटा आता है। चावल को मशीन में डालने से चावल का आटा आता है। लेकिन मानव देह में कितने भी मधुर पदार्थ डालो, अंत में व्यर्थ मल मूत्र ही निकलता है। मृत्यु के बाद मानव देह किसी काम का नहीं होता है। उसका या तो दहन करना पड़ता है या मिट्टी में डालना पड़ता है। भौतिक रूप से देखने पर मानव देह का कोई मूल्य नहीं दिखाई देता है।

लेकिन इसी देह से मानव ऐसी चीजें हासिल कर सकता है जिसे ८४ लाख जीवों में से कोई प्राप्त नहीं कर सकता। और मनुष्य ऐसा कर भी रहा है। कई सारी चीजों का निर्माण कर सकता है। सृष्टि से संसार की मदद कर सकते हैं। कर भी रहा है। मृत्यु के बाद व्यर्थ लगने पर भी, जिंदा रहते समय मानव देह अत्यंत विशिष्ट है, अमूल्य है। क्योंकि मानव देह के अंदर ध्यान साधना करने का मौका है। जो ८४ लाख जीवों में से किसी के देह के अंदर नहीं है। इसलिए "संसार व्यामोह" में फँसकर अपने अमूल्य जीवन को व्यर्थ नहीं करना चाहिए। योगियों की तरह ध्यान साधना के लिए उसका उपयोग करके दिव्यता पानी चाहिए।

"तपोलोक जाने के लिए तपस्या चाहिए! सत्यलोक जाने के लिए सत्य चाहिए!"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“व्यर्थ नहीं - बचत करनी है!”

मानव अपने जीवन को अपशिष्ट (असंस्कृत) कर रहे हैं। लेकिन अपने जीवन का निर्माण नहीं कर रहे हैं। यानी जीवन को व्यर्थ कर रहे हैं लेकिन जीवन का सही उपयोग नहीं कर रहे हैं।

लोग अपने जीवन को व्यर्थ में गंवा रहे हैं। व्यर्थ कार्य कर रहे हैं। अपनी शक्ति, वाक्, बुद्धिमत्ता और अपने जीवन को भी व्यर्थ कर रहे हैं।

मानव को जीवन सदुपयोग करने के लिए दिया गया है, ना कि दुरुपयोग करने के लिए। व्यर्थ करने का मतलब क्षति प्राप्त करना है। समय पारित करने के लिए करने वाले काम, मनोरंजन के लिए करने वाले काम व्यर्थ हैं। लेकिन लोक कल्याण के लिए करने वाले कार्य, अच्छे कार्य, आत्म उन्नति के लिए करने वाले कार्य लाभ वाले हैं। इन्हें करना जीवन का सदुपयोग करने के बराबर है। इसी को बचत करना कहते हैं।

सब लोग अच्छे से सोचिए! कुछ भी व्यर्थ नहीं करना है। हर एक चीज से लाभ प्राप्त करना है। बचत करने वाले लोग आनंदित रह सकते हैं।

जीवन मानव को दिया गया अमूल्य मौका है, उसे व्यर्थ नहीं करना है। दुरुपयोग कभी नहीं करना है। दुरुपयोग केवल क्षति ही नहीं, बल्कि कष्ट भी देता है। इसलिए छोटे-छोटे अच्छे काम करके पुण्य को इकट्ठा करना है।

सबसे महान कार्य आत्म सेवा है क्योंकि आत्मा भगवान है। भगवान के कार्य और भगवान की सेवा करना महान है। यही शाश्वत है। ध्यान करना, ध्यान बांटना, ध्यान कार्यक्रम में शामिल होना, ध्यान के कार्य का प्रबंधन करना, ये सब आत्म कार्य होते हैं।

इसलिए ध्यान करते हुए, ध्यान प्रचार करते हुए, ध्यान के कार्यक्रम में शामिल होते हुए अपने जीवन का सदुपयोग करना है। यानी बचत करके इकट्ठा करना है। जीवन को व्यर्थ नहीं करना है।

"आप अच्छे काम क्यों नहीं कर रहे हो?" पूछने पर लोग जवाब देते हैं कि "हमें पता नहीं। हमें किसी ने बताया नहीं! हमें कैसे पता लगेगा?"

जवाब तो ऐसा देते हैं कि उन्हें अच्छे काम के बारे में पता नहीं, लेकिन बुरे कार्य करते रहते हैं। बुरे कार्य करने के बारे में कैसे पता लगा? बुरा करने के लिए किसने कहा? बुरे काम तो कर रहे हैं। कैसे? किए गए बुरे कामों का बहुत ही होशियारी से समर्थन करते हैं। छुपाते हैं। किसी को पता नहीं लगने की सावधानी बरतते हैं। इतना ही नहीं, बुरे कर्मों से बाहर निकलने की योजना भी होशियारी से बनाते हैं, अत्याचार करते हैं। क्या यह सब होशियारी नहीं है?

इन सब चीजों की जानकारी रखने वालों को अच्छे की जानकारी नहीं होगी क्या? अगर पता नहीं है तो पता लगाने के लिए कोशिश करना नहीं जानते हैं क्या? प्रयत्न नहीं करने का मतलब अच्छा करना पसंद नहीं है क्या?

"अच्छा करना पसंद नहीं है" कहने के बजाए "हमें पता नहीं है" कहना मूर्खता नहीं है क्या? ऐसे बेतुके जवाब देकर किसे धोखा देना चाहते हैं? धोखा देने से आपको क्या मिलेगा?

तरह-तरह से खुद का समर्थन करते हुए अच्छे कर्म किए बिना पाप करते जाएंगे तो किसे क्षति मिलेगा? दुखी कौन होगा? इतनी योजना बनाने वाले दुख और क्षति के बारे में क्यों नहीं सोचते हैं?

सोचना चाहिए! ना सोचने से खुद को धोखा देने वाले बनेंगे। खुद को क्षति पहुंचाएंगे। इसलिए कभी मत कहिए कि आपको अच्छे कार्य के बारे में पता नहीं है। अच्छा करने की कोशिश कीजिए।

मानव का बुरा करना और अच्छा ना करने के पीछे का कारण "अच्छाई के बारे में पता ना होना नहीं है।" क्योंकि मानव को सब पता है।

अच्छा पता है, बुरा पता है, अपने द्वारा किए गए बुरे के बारे में भी उसे पता है। फिर भी वह अच्छा क्यों नहीं कर रहा है? कारण है कि, "अच्छा करना बहुत कठिन है। बुरा करना बहुत आसान है।"

इसलिए मानव "कठिन काम यानी अच्छा करना छोड़ रहा है और आसान काम यानी बुरा कर रहा है।"

लेकिन सृष्टि धर्म के अनुसार, "कठिन समझकर अच्छा करना छोड़ देंगे तो जीवन में लाभ नहीं प्राप्त कर पाएंगे, उल्टा क्षति मिलेगी।" इसी तरह, आसान समझकर बुराई करते जाएंगे तो तात्कालिक लाभ मिलेंगे, लेकिन आखिर में कष्ट मिलेगा। वर्तमान दुनिया में अच्छाई से अधिक बुराई होने का मुख्य कारण यही है। "बुरा करना आसान है। अच्छा करना कठिन है।"

भगवान अंतरात्मा के रूप में हर एक के लिए अच्छाई के बारे में और मानव द्वारा किए जाने वाले धर्म के बारे में बोधना कर रहा है। लेकिन मानव अपनी अंतरात्मा की आवाज को नजरअंदाज करके पाप कर रहा है। कष्ट को बुला रहा है। स्वयं के पेट में छुरा घोंप रहा है। अपने जीवन का विनाश कर रहा है।

"अंतरात्मा" के रूप में मानव को हमेशा अच्छाई और बुराई के बारे में पता लगता रहता है। लेकिन समस्या आचरण करने में है। मानव के अंदर आचरण करने की शक्ति नहीं है। उस शक्ति को प्राप्त करके आचरण करने के लिए हर एक को ध्यान करना आवश्यक है। ध्यान करने से शक्ति का विकास होगा। 'अंतरात्मा' यानी 'भगवान' के द्वारा बोध किए गए धर्म और अच्छाई का आचरण कर पाएंगे। जीवन को धन्य बना पाएंगे।

"इस सत्य को ग्रहण करने वाला कि 'मैं आत्मा हूँ', विलाप कभी नहीं करेगा।"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“धर्म - अधर्म”

संपूर्ण महाभारत दो विषयों पर है। वह विषय पांडवों और कौरवों के बीच हुआ युद्ध नहीं है। वह अधर्म और धर्म के बीच हुआ युद्ध है। वह धर्म की महानता और धर्म आचरण करने से प्राप्त होने वाले लाभ को बताने के लिए है। इतना ही नहीं, अधर्म का परिणाम बताने वाला महाकाव्य महाभारत है। यह धर्म का अनुसरण करने वाले पांडवों और अधर्म का आश्रय लेने वाले कौरवों के बीच हुए युद्ध की बोधना है! यानी ‘धर्म और अधर्म के बीच हुए युद्ध और उसके परिणाम की बोधना है।’

अधर्म का आश्रय लेने वाले कौरवों के पास सैनिक बल अधिक था। वे महान योद्धा थे फिर भी हार गए। धर्म पर निर्भर होने वाले पांडव सैनिक बल कम होने पर और महान योद्धा ना होने पर भी आखिर में जीत गए।

कौरवों को श्री कृष्ण का पूरा सैनिक बल दिया गया था। लेकिन उनके पास दैवबल नहीं था। धर्म की रक्षा करने वाले पांडवों के पक्ष में दैवबल था। यानी भगवान उनके साथ थे। यानी कृष्ण उनके साथ थे।

धर्म का साथ देने वाले पांडवों को शुरुआत में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा लेकिन अंत में विजय प्राप्त हुई। सुख मिला। अधर्म का साथ देने वाले कौरवों को शुरुआत में भोग मिले लेकिन बाद में वे पराजित हुए और उनका विनाश हुआ।

इससे हमें पता चलता है कि चाहे कोई कितना भी महान हो, अधर्म का साथ देने से, अधर्म का समर्थन करने से, अधर्म के पक्ष में रहने से उनका विनाश होगा और सजा मिलेगी। धर्म का साथ देने वालों का साथ भगवान देते हैं। उन्हें हमेशा आपत्तिजनक समय में दिव्य शक्ति मदद करती है। यही महाभारत का आंतरिक अर्थ है। अधर्म के साथ रहने वालों का साथ भगवान नहीं देते हैं, बल्कि भगवान उनसे दूर हो जाते हैं। और वे भगवान द्वारा सजा प्राप्त करते हैं।

दुर्योधन, शकुनी, कर्ण को धर्म पता था, फिर भी उन्होंने अधर्म का साथ दिया। इसी तरह, भीष्म और द्रोण को धर्म पता था फिर भी वे अपनी आंखों के सामने हो रहे अधर्म को देखते खामोश रहे, इसलिए बर्बाद हो गए।

पांडवों को धर्म के बारे में पता था। उन्होंने धर्म की रक्षा की। आखिर में धर्म द्वारा उन्होंने रक्षा प्राप्त की। इसलिए “धर्मो रक्षति रक्षिता” कहा गया है।

इस महाभारत कथा का संदेश सबको धर्म की रक्षा करने के लिए कह रहा है। धर्म क्या है? धर्म का मतलब, जिसने सृष्टि का निर्माण किया है, उनके द्वारा बताए गए नियमों का पालन करना है। इस सृष्टि के हर जीव जंतु के व्यवहार के नियम हैं। हर जीव को किस तरह जीना है, किस तरह नहीं जीना है, किस तरह व्यवहार करना है, बताने वाला ही धर्म है। भगवान की सृष्टि में सभी जीवों के लिए आनंद से रहने के लिए बनाई गई व्यवस्था धर्म है।

धर्म इतना महान है कि जिस तरह एक हाथी के पदचिह्न में बाकी सारे जानवरों के पदचिह्न अंतर्निहित हैं, उसी तरह एक धर्म में संपूर्ण अंतर्निहित है। क्योंकि हर चर्या धर्म का अनुसरण करती है। इसलिए हर व्यक्ति को धर्म का आचरण करना है। धर्म की रक्षा करनी है। यही प्रकृति धर्म है। धर्म की रक्षा कैसे करनी है?

पत्री जी ने कहा है, **"धर्म के बारे में कोई बाहर वाला नहीं बताएगा। स्वाभाविक रूप से हमारी अंतरात्मा से धर्म बाहर आएगा।"**

भगवान ने धर्म का निर्देश किया है। इसलिए उन्हें धर्म पता है। इसलिए उनके द्वारा बताए गए मार्ग पर चलना है। कैसे? भगवान सबके अंदर आत्म रूप में हैं और सबको धर्म बोध करा रहे हैं। हर विषय, हर कार्य, हर क्षण सूचित कर रहे हैं। इसलिए अंतरात्मा के द्वारा बताए गए मार्ग पर चलना है। अंतरात्मा की बात मानने वाले धर्म का आचरण करने वालों के समान हैं। 'धर्म' को अंदर से बाहर लाने के लिए ध्यान आवश्यक है। ध्यान करने वाले लोग अपनी अंतरात्मा का अनुसरण करेंगे। इसलिए "ध्यान कीजिए। धर्म की रक्षा कीजिए। मुक्ति प्राप्त कीजिए।"

"रचना करने वाली आत्मा को सृष्टि (निर्माण) धर्म पता होता है लेकिन निर्माण किए जाने वाले मन को सृष्टि धर्म पता नहीं है।"

मानव को आत्मा का अनुसरण करना चाहिए लेकिन मन का नहीं। इसके लिए ध्यान अच्छा मार्ग है। क्योंकि ध्यान करने वाला अपने मन पर काबू पाकर अपनी अंतरात्मा की बात सुन सकता है। इसलिए विशेष रूप से ध्यान करना है।

“प्रकृति के प्रति मानव का धर्म!”

मानव धर्मों में से एक मुख्य धर्म 'प्रकृति की रक्षा करने का धर्म है'। **“हम धर्म की रक्षा करेंगे तो धर्म हमारी रक्षा करेगा”** यानी **“प्रकृति की रक्षा करने से प्रकृति हमारी रक्षा करेगी!”**

प्रकृति कौन है? एक रुप से प्रकृति भगवान है क्योंकि प्रकृति में पंच भूत हैं। वे “भूमि, जल, अग्नि, वायु और आकाश” हैं। यह सब भगवान से पैदा हुए हैं। सभी चराचर सृष्टि और प्राणी प्रकृति का भाग हैं यानी भगवान हैं।

हमें प्रकृति से प्रेम करना है, स्नेह करना है, सहजीवन करना है। प्रकृति के निर्णय की इज्जत करनी है और उसकी रक्षा करनी है। प्रकृति का नाश नहीं करना है, प्रकृति से द्वेष नहीं करना है, उसकी हिंसा नहीं करनी है। प्रकृति निर्णय का विमर्श नहीं करना है। ऐसा करना प्रकृति के प्रति मानव का धर्म है। इसके विरुद्ध व्यवहार करना प्रकृति के विरुद्ध व्यवहार करने जैसा है, जिसका परिणाम हमें भुगतना पड़ेगा।

प्रकृति का भाग होने वाली वृक्ष जाति पंचभूत में से एक होने वाले जल से निर्मित हुई है। इसी तरह, जीवाणु और कीटक, सर्प जाति “धरती और जल” से निर्मित हुई है। पक्षी जाति “जल, अग्नि और वायु” से निर्मित है। जंतु जाती “भूमि, जल, अग्नि और वायु” से निर्मित है। मानव जाति “पंचभूत” से निर्मित है, यानी प्रकृति। हम जानते हैं कि प्रकृति के सभी जीव प्रकृति का भाग हैं। इसलिए किसी एक की हिंसा करना प्रकृति की हिंसा करने के समान है।

इसे जाने बिना मानव स्वार्थ और अपनी तुच्छ इच्छाएं पूरी करने के लिए प्रकृति और प्रकृति के प्राणियों की हिंसा करते हैं। हर रोज अपने मजे के लिए लाखों जानवरों की बलि चढ़ाकर उन्हें खाते हैं। खून खराबा करते हुए प्रकृति को दुखदेते हैं।

पेड़ों और वनों को काटकर बर्बाद कर रहे हैं। जानवरों के बीच शर्त लगाकर, जानवरों की तकलीफ देखकर विनोद प्राप्त कर रहे हैं। पक्षी और तोते को पिंजरे में बंद करके, मछलियों को एक्वेरियम में रखकर, अपने आनंद के लिए उनकी स्वेच्छा छीन रहे हैं।

इतना ही नहीं, अपने साथ वाले मानव, बलहीन लोग और स्त्रियों की हिंसा कर रहे हैं। उन पर अत्याचार कर रहे हैं। मासूम लोगों को धोखा दे रहे हैं। प्रकृति में हर जगह हिंसा और अत्याचार फैल गया है। धोखेबाजी और दादागिरी बढ़ गई है। सब अपने स्वार्थ का सोच रहे हैं, दूसरों के बारे में कोई नहीं सोच रहा है। लोग नहीं सोच रहे हैं कि सब लोग हमारी तरह हैं। सब जानवर हमारी तरह प्राणी हैं। प्रकृति पर हिंसा प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।

कोई भी प्रकृति के बारे में नहीं सोच रहा है। प्रकृति कौन है? प्रकृति का पात्र क्या है? प्रकृति से क्या लाभ हैं? प्रकृति से हमें क्या लाभ प्राप्त हो रहा है? प्रकृति के प्रति हमारा धर्म क्या है? कोई नहीं सोच रहा है। प्रकृति के प्रति मानव धर्म का उल्लंघन करने से आने वाली कठिनाइयों के बारे में कोई नहीं सोच रहा है। प्रकृति के धर्म का उल्लंघन करने से क्या होगा? कैसी क्षति होगा? इन सब बातों के बारे में मानव नहीं सोच रहे हैं। लेकिन सोचना चाहिए।

क्योंकि प्रकृति मानव की माता है। माँ की गोद में खेलते हुए बच्चे की तरह मानव प्रकृति की गोद में जीवन बिता रहे हैं। हम सब प्रकृति के गोदी में खेल रहे हैं। माता बच्चों को सब कुछ देती है। इसी तरह प्रकृति हमें सब कुछ दे रही है। हमारी जरूरतें और खुशियों को पूरा करने के लिए बहुत कुछ दे रही है।

माँ बच्चे को अपनी गोदी में खिलाती है, उसकी भूख मिटाती है, बच्चे की खुशी देखकर खुद खुश हो जाती है। बच्चे को प्यार करके प्रसन्न हो जाती है।

इसी तरह, प्रकृति अपने खूबसूरत हिमालय, झरने, नदी, रमणीय दृश्य से हमें आनंद देती है। फल, फूल और सब्जी से हमारी भूख मिटाती है। जल देकर हमारी प्यास बुझाती है। हवा देकर आराम पहुंचाती है। हरे भरे पेड़ पौधों से धान्य देती है।

सही समय पर बारिश देती है। पेड़, पौधे उगाती है। फूलों के खिलने में मदद करती है। सबको खुशी देखकर प्रसन्न हो जाती है। अपने प्रति लोगों के प्यार से खुश हो जाती है।

माँ का दूध पीते समय माँ प्यार से सहलाती है। लेकिन दूध पीते हुए माँ के वक्ष को काटने से या मारने से उसे गुस्सा आता है। माता सदा देती है लेकिन बच्चे की शरारत अधिक हो गई तो दूध नहीं देती है। तब बच्चा तड़पने लगता है।

इसी तरह, विपरीत कार्य करने से यानी जीव हिंसा, मांस भक्षण जैसे कार्य करने से प्रकृति को गुस्सा आ जाता है, जिसकी वजह से वह हमें भूकंप, बाढ़, सुनामी, तूफान, जैसी सजाएं देती है। हमारी अकल ठिकाने लाने के लिए प्रकृति हमें सजा देती है। समय पर बारिश नहीं होती है, अनावृष्टि और आकाल पड़ता है। मानव तड़पने लगते हैं। धरती पर रहने वाले चर और अचर प्रकृति का भाग हैं। किसी की हिंसा नहीं करनी चाहिए। सबसे प्रेम करना चाहिए। जरूरत के हिसाब से उपयोग करके सीमा में रहना है।

दूध पीने से माँ नहीं मरती है। उसे दुख नहीं पहुंचता है। भार कम होता है। इसी तरह पेड़ों के फल, सब्जी का उपयोग करने से प्रकृति को कोई क्षति नहीं होती है। लेकिन पेड़ पौधों को काटना नहीं चाहिए। पेड़ की शाखा और फूलों को काटना नहीं चाहिए। अपने आप को सीमा के अंदर रखना है।

प्रकृति की हिंसा करना, माँ की हिंसा करने के समान है। प्रकृति से सारी जरूरतों को पूरा करते हुए, प्रकृति में रहने वाले प्राणियों की हिंसा करना, माँ का दूध पीते हुए माँ के पेट में लात मारने के समान है। ऐसे व्यक्ति से बड़ा द्रोही कोई नहीं होगा। वह सजा के योग्य है। धरती पर प्रकृति के विरुद्ध चीजें हो रही हैं, इसलिए प्रकृति के विपरीत दैवीय आपदा आ रही है।

प्रकृति माता का गुस्सा दैवीय आपदा यानी प्राकृतिक आपदाओं के रूप में गरजता है। यह आपदा मानव को तड़पाती है जिसे मानव सहन नहीं कर पाता है।

दैवीय आपदा अपने बच्चों को सजा देना है। उनकी अकल ठिकाने लगाना है। प्रकृति के प्रति अधर्म व्यवहार दैवीय आपदा का कारण बनता है।

प्रकृति के प्रकोप और गुस्से को हल्के में नहीं लेना है। माता ने ही प्रकोप वाला रूप धारण किया है, फिर धीरे-धीरे शांत हो जाएगी, समझना बेवकूफी है। इन

सारी चीजों को साधारण समझकर नजरअंदाज करने से मानव को फिर से प्रकृति के प्रकोप का शिकार होना पड़ेगा।

क्योंकि माँ हमेशा बच्चों को सजा नहीं देती है ना? सहनशक्ति टूटने पर ही सजा देती है। इसी तरह, प्रकृति हमेशा अपने गुस्से का प्रदर्शन नहीं करती है। जब मानव का व्यवहार हद के पार हो जाता है तभी प्रकृति सजा देती है।

प्रकृति के प्रकोप से मानव तड़प जाता है, चिल्लाता है। बर्दाश्त नहीं कर पाता है। इसलिए याद रखिए, प्रकृति के प्रति हमारे धर्म को जानकर आचरण करना है। प्रकृति से प्रेम करना है। हिंसा नहीं करनी है। जानवरों की हत्या नहीं करनी है। मांस भक्षण नहीं करना है। स्त्री की इज्जत करनी है। बलहीन की इज्जत करनी है। यही प्रकृति का धर्म है।

इस धर्म को जानने के लिए और आचरण करने के लिए 'ध्यान' करना है। ध्यान करने से प्रकृति और प्रकृति के धर्म के बारे में जान पाएंगे। प्रकृति के अनुसार जी पाएंगे। प्रकृति यानी भगवान की मदद से आनंद समेत जीवन बिता पाएंगे।

"पराजय भी विजय की एक मुख्य सीढ़ी है!"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

"यज्ञ ही मुक्ति का मार्ग है!"

श्लोक : **यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।**

भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्॥ (भगवद्गीता : ३ - १३)

तात्पर्य : जो सत् पुरुष यज्ञ से बचे हुए अंश को खाते हैं, वे समस्त पापों से मुक्त हो जाते हैं। परंतु जो केवल अपने लिए भोजन पकाते हैं वे पापी होते हैं और पाप का भक्षण करते हैं।

यज्ञ यानी लोक कल्याण के लिए किया जाने वाला कार्य।

मनुष्य के दो प्रकार हैं -

(१) स्वयं के लिए कर्म करने वाले।

(२) लोक कल्याण के लिए कर्म करने वाले।

यज्ञ करने वाले को यज्ञ प्रसाद मिलता है। यानी दूसरों के आनंद के लिए कार्य करने पर जब सामने वाला संतुष्ट होकर कुछ प्रदान करता है तो उसे 'यज्ञ प्रसाद' कहते हैं। यज्ञ प्रसाद से जीने वाले मुक्ति प्राप्त करते हैं। अपने लिए जीने वाले 'स्वयं के लिए पकाकर खाने वाले लोगों में से हैं'। केवल स्वयं के लिए पकाकर खाने वाला आहार पापी आहार होता है। ऐसे लोग बंधन में फंस जाते हैं और दुख प्राप्त करते हैं। यही ऊपर दिए गए श्लोक में श्री कृष्ण भगवान का संदेश है।

संदेह आ सकता है कि "स्वयं के लिए पकाकर खाने वाला आहार पापी आहार कैसे होगा?" लेकिन यह सच है कि केवल स्वयं के लिए बनाकर खाने वाला आहार पापी होता है। क्योंकि जीने के लिए आहार आवश्यक है। आहार पैदा करने के लिए मेहनत आवश्यक है। मेहनत करते समय हम बहुत सारे पाप करते हैं। यानी हल जोतते समय हम पेस्टीसाइड से बहुत सारे कीटक और कीड़ों को मार देते हैं। चूहों को मार देते हैं। पेस्टिसाइड से कई सारे प्राणी मर जाते हैं जिससे हमें पाप लगेगा। जीवन जीने के लिए पैसा कमा रहे हैं, कुछ पैसे से पकाकर खा रहे हैं। फिर भी वह पापी आहार होगा। इसलिए केवल स्वयं के लिए पकाकर खाना पाप होता है।

मुक्ति प्राप्त करने के लिए यज्ञ प्रसाद के साथ जीना है। यज्ञ प्रसाद यानी दूसरों को आनंद देने वाले कार्य करने पर उनकी संतुष्टि से दिया गया उपहार होता है।

इसलिए "स्वयं के लिए जीना बंधन है। दूसरों के लिए जीना मुक्ति है।"

स्वयं के लिए जीने वाले को बहुत चीजें चाहिए। आहार, घर, वस्त्र, घर में जरूरतें चाहिए। ऐसे बहुत चीजें चाहिए जिनके लिए पाप करना पड़ेगा। जिसके पास घर है उसे घर साफ करना पड़ेगा। घर साफ करते समय बहुत सारे मच्छर, मक्खियों, चूहों और कॉकरोच को मारना पड़ेगा। कितना पाप है ना! इस तरह हम बंधन में फंस जाएंगे जिसकी वजह से कई सारे कष्ट उठाने पड़ेंगे।

जीने के लिए बहुत सारे पाप करने पड़ते हैं। एक बार सोचिए, मनोरंजन, विलासिता और तुच्छ इच्छाएं पूरी करने के लिए कितने सारे पाप करने पड़ेंगे? जानवरों की हत्या करके उनका माँस खाएंगे तो कितना पाप होगा! क्या हम कभी इस बंधन से बाहर निकल पाएंगे? इसलिए स्वयं के लिए नहीं, बल्कि दूसरों के लिए जीना चाहिए। दूसरों के लिए जीने वालों को पाप करने का मौका नहीं मिलता है।

क्योंकि लोक कल्याण से संबंधित कार्य करने वाले यानी यज्ञ करने वाले को आहार पैदा करने की जरूरत नहीं है। उसे पेस्टिसाइड डालकर कीटक को या किसी को मारने की जरूरत नहीं है। सबको मारकर पाप का घड़ा भरने की जरूरत नहीं है। सबके घर उसके हैं। दूसरों के द्वारा साफ किए गए घर में वह विश्राम करेगा। जिसकी वजह से उसे मच्छर मक्खी मारकर पाप नहीं लगेगा। ऊपर से वह सबके प्रति उपकार करता है। **"पाप किए बिना उपकार करने वाला अवश्य मुक्ति प्राप्त करेगा।"**

लेकिन **"उपकार किए बिना साफ करने वाले को क्या दुख नहीं प्राप्त होगा?"** इसलिए ध्यान कीजिए। सब लोगों को ध्यान सिखाइए। ध्यान सिखाना उपकार का काम है। ध्यान प्रचार करने वाले को हर जगह इज्जत मिलती है, आदर मिलता है। सब लोग प्यार देते हैं। यही "यज्ञ प्रसाद" है। इससे बड़ा यज्ञ कोई नहीं है। इसलिए ध्यान करते हुए, उपकार करते हुए, योगी का जीवन बिताइए और मुक्ति प्राप्त कीजिए।

"मंदिर - ध्यान मंदिर!"

"मंदिर किसलिए है? ध्यान मंदिर किसलिए है?" प्रश्न पर प्रस्तुत है पत्री जी द्वारा दिया गया विवरण।

मंदिर हरिद्वार है। ध्यान मंदिर हरिधाम है। हरिद्वार हरि के रहने की जगह को सूचित करता है और हरिधाम हरि के रहने की जगह को। हरिधाम में हरि रहता है। इसलिए हरिधाम के अंदर जाने पर हरि दिखेगा, लेकिन हरिद्वार के पास हरि नहीं दिखेगा।

हरिद्वार किसलिए है? हरिद्वार केवल हरि के अंदर होने के बारे में सूचित करने के लिए है। अगर हरिद्वार नहीं होगा तो पता कैसे चलेगा कि हरि कहाँ होगा? इसलिए अंदर रहने वाले आलय का द्वार कहीं दूर बाहर होता है।

मंदिर ध्यान मंदिर को दिखाने के लिए और ध्यान मंदिर के अंदर प्रवेश करने के लिए है। ध्यान कराने वाले भागवत साक्षात्कार को दिखाने के लिए है। मंदिर नहीं होगा तो सामान्य मानव भूल जाएंगे कि भगवान नामक कोई है। मंदिर के अंदर भगवान नहीं होते हैं।

द्वार के पास भगवान की मूर्तियाँ होती हैं ताकि भगवान के अंदर होने के बारे में सूचित कर सकें। इसी तरह, मंदिर के अंदर भगवान की मूर्ति रखते हैं, यह सूचित करने के लिए कि भगवान तुम्हारे अंदर हैं।

इस आंतरिक अर्थ को जानकर मंदिर के अंदर जाने वाला हर एक व्यक्ति ध्यान मंदिर में जाकर, ध्यान करके, अंतर्मुखी बनकर भगवान के सत्य रूप का दर्शन कर सकता है। धन्य हो सकता है।

इसका अर्थ यह बताना है कि **"भगवान सबके अंदर आत्म रूप में मौजूद हैं!"**

"दूसरों पर अपकार करना पाप है! - दूसरोंपर उपकार करना पुण्य है!
स्वयं पर उपकार करना मोक्ष है!" - ब्रह्मर्षि पत्री जी

“बड़ों के पास रिक्त हाथ नहीं जाना चाहिए!”

बड़ों के पास, राजा, गुरु, या देव के पास जाते समय रिक्त हाथ यानी खाली हाथ नहीं जाना है। किसी ना किसी चीज को लेकर जाना है।

किसी ना किसी चीज का मतलब हमारी पसंद का ले जाना नहीं, बल्कि जिसके लिए ले जा रहे हैं उनकी पसंद का ले जाना है। सामने वाले इंसान की मन पसंदीदा चीज ले जाना है। उन्हें आनंद देने वाली चीज ले जाना है। उनके मन को आकर्षित करने वाली चीज ले जाना है। साधारण मानव भौतिक चीजें ले जा सकते हैं। चीजें जो भी हों, महान इंसान के लिए साधारण होती हैं। वह उन चीजों के प्रति आसानी से आकर्षित नहीं होते हैं। आसानी से आनंद प्राप्त नहीं करते हैं। इसलिए महान लोगों के पास ले जाने वाली चीजें भी महान होनी चाहिए।

भगवान के पास ले जाने वाली चीजें और भी महान होनी चाहिए। सामान्य नारियल, केला और फल जैसे नहीं होनी चाहिए। गुरु और भगवान को आकर्षित करने वाले उपहार फल फूल नहीं हैं। हमारे द्वारा किए गए अच्छे काम, अच्छे गुण और अच्छा व्यवहार हैं। लोक कल्याण से संबंधित यही चीजें हैं। इन सब चीजों को उपहार के तौर पर देने से वह आनंदित होंगे, संतुष्ट होंगे। ना मांगने पर भी हमें जो चाहिए वो प्रदान करेंगे। हम पर अनुग्रह करेंगे। इसलिए रिक्त हाथ से नहीं, बल्कि अच्छे कार्य करके, अच्छा व्यवहार लेकर उनके पास जाना है, और हमारे उपहार को उन्हें समर्पित करना है। बाहर से इतने अधिक खास नहीं लगने पर भी यह उपहार उन्हें प्रसन्न करेंगे, उन्हें संतुष्ट करेंगे।

लेकिन स्वार्थी गुरु महंगी चीजें और उपहार की आशा करते हैं। धन की आशा करते हैं। ऐसी अल्प इच्छाएं मांगने वाले तुच्छ नहीं तो क्या होंगे?

भगवान कभी नहीं देखते कि हमने कितने महंगे उपहार दिए हैं। उपहार देने के पीछे का हमारा उद्देश्य देखते हैं। भगवान देखते हैं कि स्वार्थ की बुद्धि से दे रहे हैं, या किसी चीज की आशा करके दे रहे हैं, या किसी चीज की आशा किए बिना भक्ति भाव से दे रहे हैं। उद्देश्य सही होगा तो नीति से दी गई हर चीज को भगवान शुद्ध

समझकर प्रेम से स्वीकार करेंगे। छोटे उपहार के लिए छोटी इच्छा और बड़े उपहार के लिए बड़ी इच्छा पूरी नहीं करते हैं। ऐसा सोचने वाले बिल्कुल गलत हैं।

यही बात नीचे दिए गए श्लोक द्वारा बताई गई है,

श्लोक : **पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।**

तदहं भक्त्यु पहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥ (भगवद्गीता : ९ - २६)

तात्पर्य : पत्र, पुष्प, फल या जल जो मुझे (ईश्वर को) भक्तिपूर्वक अर्पण करता है, उस शुद्ध चित्त वाले भक्त के अर्पण किए हुए पदार्थ को मैं प्रीति से ग्रहण करता हूँ।

ऊपर के श्लोक में बताया गया है कि "किसी भी वस्तु को भक्ति भाव से समर्पित करने पर मैं संतुष्ट होकर स्वीकार करता हूँ"।

यानी हमें समझ आता है कि यहाँ वस्तु से अधिक वस्तु समर्पित करने वाले व्यक्ति के भाव का महत्त्व है।

सबसे अधिक 'स्वयं' समर्पण से भगवान संपूर्ण मंत्रमुग्ध हो जाएगा। सत्यभामा जैसे अहंकार भाव से बहुत टन सोना समर्पित करने पर भी भगवान प्रसन्न नहीं होंगे। बिना अहंकार के रुकमणी देवी की तरह 'तुलसीदल' देने से भी भगवान प्रसन्न हो जाएंगे।

इसी तरह, गजेंद्र मोक्ष में गजराज ने जब कहा, "अब 'मैं' कुछ नहीं हूँ, सब कुछ तुम हो" और जब "द्रौपदी ने हाथ जोड़कर भगवान से मांग की" इन दोनों समय पर भगवान ने तुरंत अपने भक्तों की बात मानकर उन्हें कठिनाई से बाहर निकाला। इसलिए नारियल, फल जैसे अल्प उपहार का समर्पण करना छोड़कर स्वयं का समर्पण करना है। 'मैं' का समर्पण करना है। 'मैं' मन है। इसलिए "रिक्त मन" को समर्पित करना है। यही सबसे महान उपहार है, क्योंकि 'मैं' में अहंकार छुपा हुआ होता है। जब 'मैं' को मन से हटा दिया जाता है तो आत्मा रह जाती है। इस रह गई 'आत्मा' का समर्पण करना है। इसे "आत्म निवेदन या ध्यान" भी कहते हैं। ध्यान करने का अर्थ 'मैं' का समर्पण है, इसलिए ध्यान कीजिए। भगवान के प्रीति पात्र बनिए।

“आत्म निवेदन”

(मंदिर के नारियल निवेदन (समर्पण का आंतरिक अर्थ)

भक्त ९ प्रकार के होते हैं। जैसे कि, 1) श्रवण करने वाले , 2) मनन करने वाले, 3) कीर्तन करने वाले, 4) चरण सेवा करने वाले, 5) अर्चना करने वाले, 6) प्रणाम करने वाले, 7) दास, 8) सख्य करने वाले

इन सबसे अधिक, नौवें प्रकार वाले, ‘आत्म निवेदन’ करने वाले भक्त शिर्डी साईं बाबा को बहुत पसंद हैं। आत्म निवेदन साईं बाबा को बहुत पसंद है। आत्म निवेदन उनके लिए प्रीति दायक है। अन्य भक्तों से अधिक उन्हें आत्म निवेदन करने वाला भक्त बहुत पसंद है।

बाबा के पसंदीदा भक्त बनने के लिए, उनकी मनपसंद चीज को समर्पित करने के लिए ‘आत्मा निवेदन’ करना है। यानी जो व्यक्ति अपने भगवान को प्रसन्न करने के लिए, खुद के लिए कठिन लगने वाले काम को करके दिखाएगा, वही भगवान का मनपसंद भक्त बनेगा। तभी भगवान का अनुग्रह प्राप्त करेगा।

याद रखिए भगवान की कृपा प्राप्त करने के लिए **“केवल उन्हें पसंद करना काफी नहीं है। भगवान की पसंद की चीजें करनी हैं।”** इसलिए हमें जो पसंद है उसका समर्पण नहीं, बल्कि भगवान को जो पसंद है उसे समर्पित करना है। चाहे वह कितना भी कठिन क्यों ना हो!

शिर्डी साईं बाबा की मनपसंद चीज “आत्म निवेदन” है। आत्मा का निवेदन कैसे करना है? केवल साईं बाबा को ही नहीं, बल्कि हर भगवान को आत्म निवेदन करने का मार्ग हमारे बड़ों ने नारियल चढ़ाने द्वारा बताया है। यानी मंदिर में नारियल चढ़ाने का आंतरिक अर्थ यही है। हर मंदिर में सबसे पहले नारियल चढ़ाने को प्रमुखता दी जाती है। इसके पीछे का कारण यह है कि नारियल चढ़ाना ‘आत्म निवेदन’ है। नारियल “आत्म निवेदन” को सूचित करता है। इसलिए नारियल प्रमुख है।

नारियल के अंदर वाले स्वच्छ सफेद रंग के नारियल को चढ़ाने के लिए सबसे पहले बाहर के छिलके को निकालना पड़ता है। बाद में नारियल के फाइबर को निकालना पड़ता है। बाद में सफेद नारियल के ऊपर होने वाली मजबूत परत को

तोड़कर निकालना पड़ता है। तब अंदर का सफेद नारियल दिखाई देता है। तभी हम चढ़ा सकते हैं। उस समय मीठा नारियल का पानी भी प्राप्त होता है।

इसी तरह, अंदर के स्वच्छ और प्रकाशन 'आत्मा' का निवेदन करने के लिए सबसे पहले ऊपर के छिलके यानी शरीर को छोड़ना है। यानी आंख बंद करनी है। बाद में मन के अंदर रहने वाले व्यर्थ के 'अरिषड वर्ग' को यानी लालसा, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार, ईर्ष्या नामक गुण यानी नारियल के फाइबर को निकालना है। बाद में 'आत्मा' के अहंकार को तोड़ना है। यानी निकाल फेंकना है। तभी सफेद नारियल जैसा स्वच्छ और प्रकाशमान आत्मा का साक्षात्कार मिलेगा। यानी दिखाई देगा। तभी हम आत्मा का निवेदन कर सकते हैं। हमें नारियल के पानी जैसा मीठा आनंद प्राप्त होगा। शाश्वत आनंद प्राप्त होगा और हमारा जन्म धन्य बन जाएगा।

"नारियल के निवेदन करने का अर्थ आत्मा का निवेदन करना है।" भगवान को सफेद नारियल पसंद है यानी आत्मा पसंद है। आत्मा का निवेदन करने के लिए ध्यान करना है। ध्यान द्वारा आत्म निवेदन संभव है।

सबसे पहले ध्यान में आंख बंद करते हैं। देह को छोड़ते हैं। बाद में 'श्वास पर ध्यान' रखकर धीरे-धीरे मन को निश्चल करते है। धीरे-धीरे मन की शुद्धि करते हैं यानी निर्मल करते हैं। अरिषड वर्ग को दूर करते हैं। बाद में 'मैं' नामक अहंकार को दूर करते हैं। आत्म स्थिति में रहते हैं। इस प्रकार ध्यान में आत्मा का निवेदन किया जाता है।

ध्यान नहीं करने वाले लोग केवल नारियल का निवेदन कर सकते हैं। केवल भौतिक नारियल का निवेदन करने वाले भगवान की मूर्ति का दर्शन कर सकते हैं। लेकिन नारियल निवेदन के पीछे वाले आंतरिक अर्थ को ग्रहण करके ध्यान द्वारा आत्म निवेदन करने वाले भगवान के सत्य रूप का यानी असली भगवान का दर्शन कर पाएंगे।

इसलिए साईं बाबा ने आत्म निवेदन करने के लिए कहा है। यानी ध्यान करने के लिए कहना बाबा का संदेश है। इसलिए बाबा के बहुत मंदिरों में ध्यान मंदिर हैं। इसलिए मंदिर में नारियल निवेदन तक रुकने के बजाय ध्यान मंदिर में जाकर ध्यान करके आत्म निवेदन द्वारा भगवान का दर्शन करके वापस लौटते हैं। आप भी आत्म निवेदन से भगवान का दर्शन कीजिए। 'भगवान' के प्रीति पात्र बनिए। जीवन धन्य बनाइए। यही बाबा का संदेश है।

“सब वही है - सब कुछ उसी का है!”

भगवान की शक्ति से सभी जीव अपना जीवन बिता रहे हैं। अगर भगवान की शक्ति नहीं होगी तो कोई भी जीव जिंदा नहीं रह पाएगा। मानव के चलने, फिरने, हंसने, बात करने, विचार करने और देखने के पीछे का कारण भगवान और उनकी शक्ति है। अगर वह शक्ति नहीं होगी तो मनुष्य कुछ नहीं कर पाएगा। मनुष्य का शरीर शव बन जाएगा।

इसलिए मानव द्वारा किए गए हर कार्य का कारण भगवान की शक्ति है। भगवान के होने से ही मानव बात कर सकता है। अगर भगवान नहीं होंगे तो मानव बात नहीं कर सकता है। बात करने वाले भगवान ही हैं ना? देखने वाले, सुनने वाले भगवान ही हैं ना? सब कुछ वही हैं ना?

अगर भगवान नहीं होंगे तो, जो हो रहा है वह नहीं होगा। इसका अर्थ भगवान ही सब कुछ हैं ना? वही सब कुछ कर रहे हैं ना? अगर भगवान नहीं होंगे तो कोई दुष्ट इंसान हत्या नहीं कर पाएगा। चोर चोरी नहीं कर पाएगा। व्यापारी धोखा नहीं दे पाएगा। अच्छा व्यक्ति अच्छाई नहीं कर पाएगा। धार्मिक इंसान धर्म नहीं कर पाएगा। महान इंसान सेवा नहीं कर पाएगा। इसलिए भगवान सब कुछ हैं! सब कुछ भगवान का है!

अगर भगवान नहीं होंगे तो दुनिया नहीं रहेगी। कोई कुछ नहीं कर पाएगा। कुछ लोग पूछते हैं कि अगर भगवान सब कुछ हैं तो दुनिया में बुराई क्यों है और बुरा क्यों हो रहा है? बुराई होते हुए क्यों देख रहे हैं? क्या भगवान धोखा करेंगे? चोरी करेंगे? अत्याचार करेंगे?

सब जगह भगवान हैं और सब कुछ उनकी वजह से हो रहा है! फिर भी इस बात को ग्रहण किए बिना, मनुष्य ‘मैं’ नामक अहंकार से पाप कर रहे हैं। जब सब कुछ भगवान हैं तो सारे मानव भी एक हैं ना? लेकिन लोग स्वयं को एक दूसरे से अलग करके देख रहे हैं। इसलिए राग द्वेष का प्रदर्शन कर रहे हैं। इसलिए दुनिया में अशांति, दुख, अत्याचार और धोखाधड़ी चल रही है। अच्छे काम करने वाले लोग भी ‘मैं’ कर

रहा हूँ वाले अहंकार भाव का प्रदर्शन कर रहे हैं। अच्छे लोग भी सत्य को ग्रहण नहीं कर पा रहे हैं।

यहाँ सब कुछ हो रहा है। कोई कुछ नहीं कर रहा है। यहाँ सब कुछ है लेकिन किसी का नहीं है। यही असली सत्य है। इसलिए हर काम को 'मैं' भाव से करना चाहिए। 'कृतत्व भाव' को छोड़ना है।

कहते हैं कि "ईश्वर की आज्ञा के बिना चींटी भी नहीं काटती है"। यानी ईश्वर की इच्छा के बिना चींटी भी नहीं कटेगी। चींटी जैसी छोटी प्राणी के काटने के लिए भी ईश्वर की शक्ति की जरूरत है! अगर शक्ति नहीं होगी तो चींटी शव बन जाएगी। शव बनकर चींटी कैसे काटेगी? इसलिए भगवान की आज्ञा से ही चींटी काटेगी। संसार में होने वाले हर कार्य के लिए भगवान की भागीदारी आवश्यक है। भगवान के बिना कुछ संभव नहीं है।

पैदा होने वाली हर चीज खत्म हो रही है। यानी सब कुछ शून्य से पैदा हुआ है और शून्य में चला जा रहा है। आखिर तक कुछ नहीं बचने वाला है। सब कुछ माया है। सब शून्य है। सब भ्रम है।

एक बार पैदा हुआ देह मरने के बाद वापस वैसे ही पैदा नहीं हो सकता है। यानी एक नाम वाला व्यक्ति वापस उसी नाम से नहीं आता है। हर बार नए लोग आ रहे हैं। हर जगह नवीनतम है। सृष्टि में हमेशा परिवर्तन होते रहते हैं। कुछ भी शाश्वत नहीं है। यही सृष्टि धर्म है।

सब कुछ भगवान से पैदा होता है। भगवान से पैदा होने वाली चीजों को प्रकृति कहते हैं। सब कुछ भगवान द्वारा आगे बढ़ाया जाता है। उसे 'पुरुष' कहते हैं। सारी सृष्टि 'पुरुष-प्रकृति' का मिश्रण है। मानव भी। क्योंकि मानव शरीर पंचभूत से बना हुआ है। यानी प्रकृति के पंचभूत से निर्मित हुआ है। इस देह को चलाने वाली 'आत्मा' यानी 'पुरुष' है। इसलिए "सब कुछ वही है - सब कुछ उसी का है!" यही सृष्टि का रहस्य है। यह रहस्य ध्यान करने से पता लगता है। इसे पता लगाने से मोक्ष प्राप्त होता है।

"ग्रंथ पढ़ने वाले पंडित, ध्यान करने वाले ऋषि हैं।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“नाम स्मरण क्या है?”

“यस्य नाम महद्यशः” कहा गया है, यानी जहाँ नाम होता है वहाँ मन होता है। ऐसा कहने का मुख्य कारण यह बताना है कि भगवान के हर नाम के पीछे का विशेष अर्थ है। उदाहरण के लिए :-

ब्रह्म = सबसे महान
ईश्वर = शक्तिशाली
परमेश्वर = ईश्वरों का ईश्वर
न्यायशाली = अन्याय नहीं करने वाला
दयालु = सब पर कृपा दिखाने वाला
सर्व शक्तिशाली = अपनी शक्ति से जगत की सृष्टि, स्थिति और लय बदलने वाला
ब्रह्मा = जगत के विविध पदार्थ का निर्माण करने वाला
विष्णु = सब जगह, सबमें व्याप्त होकर रक्षा करने वाला
रुद्र = पहले का निर्माण करने वाला
महादेव = समस्त देवों के देवता

यह सब गुण और कर्म को बताने वाले नाम हैं। परमेश्वर के नामों के अर्थ को जानकर उनके गुण कर्म स्वभाव के अनुसार अपने स्वभाव को बदलना है। इसे ही परमेश्वर का “नाम स्मरण” कहते हैं। स्वभाव को बदलने वाला नाम स्मरण है। स्वभाव नहीं बदलेगा तो वह नाम स्मरण नहीं है।

“हरे रामा, हरे कृष्णा”, “ओम नमः शिवाय” कहने से पाप दूर नहीं होंगे। अगर ऐसा है तो इस दुनिया में कोई भी पापी नहीं होगा। इतना ही नहीं, पाप करने से कोई नहीं डरेगा। नाम स्मरण से पाप दूर करने के भ्रम में जीते हुए लोग पाप कर रहे हैं और अपने जीवन का नाश कर रहे हैं। इसकी वजह से जीवन दुखित हो रहा है।

याद रखिए! **“स्मरण नहीं, बल्कि नाम के अर्थ के उपयुक्त आचरण मुख्य है।”** नाम स्मरण करने वाले लोगों को ध्यान देना है कि क्या नाम स्मरण के अनुसार उनका स्वभाव बदल रहा है? या नहीं। बदलाव नहीं लाने वाला नाम स्मरण व्यर्थ है। यही नाम स्मरण का आंतरिक अर्थ है।

“तीर्थ स्थान क्या है?”

दुनिया में बहुत सारे लोग तीर्थ यात्रा करते हैं। इसका मुख्य कारण है कि लोग मानते हैं कि तीर्थ यात्रा से पुण्य मिलता है। और कुछ लोग मानते हैं कि तीर्थ यात्रा से पाप दूर होते हैं। बहुत सारा पैसा खर्च करके, बहुत सारे दुखों का सामना करके तीर्थ यात्रा करते रहते हैं। लेकिन लोग नहीं जानते हैं कि तीर्थ यात्रा का अर्थ क्या है? तीर्थ क्या है? अर्थ जाने बिना किए गए सारे काम व्यर्थ हैं।

इसलिए कहा गया है, “जानौ यैरन्तिवानी तीर्थानि!” यानी लोग जिसके द्वारा दुख से दूर होते हैं वही तीर्थ है! यानी “दूर करने वाले तीर्थ हैं”। लेकिन जल, स्थान और स्थल तीर्थ नहीं हैं।

वेद जैसे सत्य शास्त्र का पठन करने से, सज्जन आचार्य, परोपकार, धर्म आचरण, अहिंसा, दुश्मनी के बिना रहना, साफ ह्रदय से रहना, सत्य बोलना और आचरण करना, ज्ञान संपादन करना, ऐसी चीजें दुख से दूर करती हैं। इसलिए इन्हें तीर्थ कहते हैं।

जगह जगह घूमने से या जलाशय में डूबने से बात दूर नहीं होगी। अगर जगह जगह घूमने से पाप दूर होंगे तो गरीबों को पैसा और अंधों को आंखें मिलनी चाहिए ना? बीमारों की बीमारी दूर होगी ना? अगर ऐसा है तो इतने सारे हॉस्पिटल क्यों हैं? ऐसा नहीं होने का अर्थ यह है कि मानव के पाप दूर नहीं हो रहे हैं। दूर नहीं होने का मतलब वह तीर्थ नहीं है ना? चलिए! असलियत में दूर करने वाले तीर्थ के बारे में जानते हैं।

कितने भी शास्त्र पढ़ने पर, कितने भी सत्य बोध करने पर, इतना सारा सज्जन साहचर्य करने पर भी आखिर में पता लगने वाला सत्य है कि “दुख से दूर होने के लिए (१) सत्य का आश्रय लेना है और (२) धर्म का आचरण करना है।”

धर्म का मतलब अहिंसा का पालन है। जीव हिंसा नहीं करनी है। सत्य यानी आत्मा का आश्रय लेना है। यानी ध्यान साधना करनी है। यह दो चीजें मानव को पाप से दूर करेंगी। इसलिए वही असली तीर्थ हैं।

"जाप या ध्यान?"

भगवान ओंकार रूपी हैं, कहते हुए 'ओंकार का जाप करते हैं। लेकिन 'ओंकार का जाप करना भगवान के जाप करने के समान नहीं है। हमारे अंदर निरंतर आवाज कर रहे 'ओंकार को सुनना है। तभी हम भगवान की नजर में रहेंगे।

हम 'ओंकार का जाप कर रहे हैं लेकिन क्या हम अंदर से आने वाली 'ओंकार आवाज को सुन पा रहे हैं? नहीं ना? आंतरिक ओंकार ध्वनि को सुनने के लिए अंतर्मुखी बनकर अंतर मौन प्राप्त करना है। अंतर्मन के अलावा अंदर की ओंकार ध्वनि नहीं सुन पाएंगे। ओंकार ध्वनि को सुने बिना साक्षात्कार नहीं मिलेगा। जीवन धन्य नहीं होगा।

बहुत लोग समझते हैं कि जाप द्वारा भगवान को प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन जाप से अंतर मौन प्राप्त नहीं किया जा सकता है। क्योंकि अंदर कोई ध्वनि नहीं होने पर भी नाम का जाप करते समय ध्वनि होती है। जिसकी वजह से मौन स्थिति का नियम भंग हो जाता है। अंतर मौन प्राप्त नहीं होता है।

अंतर मौन प्राप्त करने के लिए क्या करना है? ध्यान करना है। ध्यान का मतलब अंतर मौन है। अशांत मन को शांति और विश्रांति देना है। यह 'श्वास पर ध्यान' से संभव है। तभी आंतरिक ओंकार को सुन पाएंगे। धीरे धीरे भागवत साक्षात्कार प्राप्त करेंगे।

"नर से नारायण बनना सबका जीवन लक्ष्य है।"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“मानव का कर्तव्य!”

अपने जीवन में मानव कई सारे कर्तव्य निभाता है। लेकिन असली कर्तव्य नहीं निभाता है।

मानव अपने प्रति निभाने वाले कर्तव्य को निभा रहा है। घर, वस्त्र, आहार पाने के लिए और अपने परिवार का कर्तव्य निभाने के लिए कोशिश कर रहा है। पति, पत्नी, बच्चों के प्रति कर्तव्य निभा रहा है। मित्र और समाज के प्रति कर्तव्य निभा रहा है। सबके प्रति अपना कर्तव्य निभा रहा है। अपने असली कर्तव्य को भूल गया है।

क्योंकि मानव नहीं जान रहा है कि वह किस कारण जीवित है। अपनी पंच इंद्रियों द्वारा यानी आंखों से सिनेमा देखते हुए, प्रकृति के सुंदर दृश्य देखते हुए आनंद प्राप्त कर रहा है। मनपसंद चीजें खाते हुए आनंद प्राप्त कर रहा है। गीत सुनते हुए आनंद प्राप्त कर रहा है। अपनी पसंद की खुशबू का आनंद ले रहा है। लेकिन मनुष्य जान रहा है कि यह सब किसके कारण कर पा रहा है। लेकिन उसे जानना है। उनके प्रति अपना कर्तव्य जानना है और हर हाल में अपने कर्तव्य को निभाना है।

क्योंकि मनुष्य देख रहा है लेकिन वह नहीं जानता है कि किसके कारण देख पा रहा है। मनुष्य पेट भरकर खा रहा है, लेकिन जानता नहीं है कि किसके कारण खा पा रहा है। मनुष्य बात कर रहा है, लेकिन जानता नहीं है कि किसके कारण बात कर पा रहा है। मनुष्य सुन पा रहा है लेकिन जानता नहीं है किसके कारण सुन पा रहा है। मनुष्य गंध का आनंद ले रहा है, लेकिन जानता नहीं है कि किसके कारण ले पा रहा है। मनुष्य आविष्कार कर रहा है लेकिन जानता नहीं है कि किसके द्वारा आविष्कार कर पा रहा है।

लेकिन हमें जानना है। उसके प्रति अपने कर्तव्य को हमें जानना है। क्योंकि देखने, बात करने, खाने, पीने, सुगंध लेने, स्पर्श करने का कारण ‘आत्मा’ है। आत्मा के द्वारा ही मानव सब काम कर रहा है। आत्मा के द्वारा ही मानव जीवन में आनंद प्राप्त कर रहा है। आत्मा के बिना मानव एक काम भी नहीं कर पाएगा। अगर आत्मा शरीर से निकल जाएगी तो शरीर शव बन जाएगा। यानी सबका कारण ‘आत्मा’ है।

ऐसे आत्मा के प्रति अपना कर्तव्य क्या है? क्या करना है? मानव को जानना है ना! हर चीज आत्मा द्वारा कर रहा है इसलिए हमेशा आत्मा को याद रखना है। आत्मा कोई और नहीं, बल्कि भगवान है। इसलिए जिसके कारण आपकी आंखें देख पा रही हैं, उनको देखना मानव कर्तव्य है। जिनके द्वारा आपके कान सुन पा रहे हैं, उनके बारे में सुनने के लिए अपने कानों का उपयोग करना है। यही मानव कर्तव्य है। इसी तरह जिसके कारण जीभ बात कर पा रही है, उसी के बारे में कहना है। जिसके कारण हाथ पैर काम कर रहे हैं, उनकी सेवा करने के लिए हाथ पैर का उपयोग करना मानव कर्तव्य है। जिसके कारण मन काम कर रहा है, उस पर मन का ध्यान केंद्रित करना मानव कर्तव्य है।

यानी **"इस जीवन को भगवान के लिए त्याग करना मानव कर्तव्य है"**। यानी किसी अन्य के अलावा आत्मा पर दृष्टि रखना मानव कर्तव्य है। अंदर रहने वाली आत्मा पर ध्यान रखना है। इसलिए "ध्यान करना ही मानव का असली कर्तव्य है"। धन कमाना नहीं है। नाम कमाना नहीं है। इसलिए "ध्यान" कीजिए और अपने कर्तव्य को पूरा कीजिए।

“देह सौंदर्य - आत्म सौंदर्य”

दुनिया में सब लोग देह सौंदर्य को महत्त्व देते हैं। क्योंकि लोग समझते हैं कि देह वह स्वयं हैं। शरीर की खूबसूरती के लिए, सुख के लिए मेहनत करते हैं और उसे महत्त्व देते हैं। शरीर का अलंकरण करके, शरीर को बलशाली और आकर्षक बनाने के लिए तरह-तरह की कोशिश करते हैं।

महिलाएं शरीर को नाजुक और पतला रखने के लिए और पुरुष बलशाली बनने के लिए मेहनत करते हैं। इसके लिए हर रोज व्यायाम, योगासन, वजन उठाना, पुष्टाहार लेना करते हैं। स्वयं की सुंदरता और बल को देखकर गर्वित होते हैं। अपने शरीर की सुंदरता को देखकर अंदर ही अंदर खुश होते हैं। लोग घंटों तक आईने के सामने खड़े होकर अपनी खूबसूरती बढ़ाने की कोशिश करते हैं। लगभग सभी लोग ऐसा करते हैं।

लेकिन मनुष्य को देह सौंदर्य के बारे में नहीं, बल्कि आत्म सौंदर्य के बारे में सोचना है। क्योंकि शरीर हम नहीं हैं, आत्मा हमारी है। मानव में दो प्रकार हैं - भोगी और योगी। भोगी शरीर की सुंदरता को महत्त्व देते हैं। योगी आत्म सुंदरता को महत्त्व देते हैं। योगी शरीर पर अधिक ध्यान नहीं देते हैं। शरीर चाहे काला हो या नाटा हो, अधिक ध्यान नहीं देते हैं। लंबे बाल होने पर या कोई विकलांगता होने पर ध्यान नहीं देते हैं।

इस विषय पर पुराणों में अष्टावक्र के उदाहरण द्वारा हम जान सकते हैं। वह खूबसूरत ना होने पर भी, भिकारी होने पर भी, महा ज्ञानी थे। उन्होंने देह पर ध्यान नहीं दिया। उसके बारे में नहीं सोचा। हमेशा आत्म सौंदर्य के बारे में सोचते रहे। उसे ही महत्त्व देते रहे। इसलिए महान बन गए।

शरीर को सुंदर देखने वाले हमें सुंदर समझते हैं। इससे कुछ फायदा नहीं है। लेकिन आत्म सौंदर्य को बढ़ाने से योगी लोगों ने दुनिया का उपकार किया है। वह सबको ज्ञान और आनंद बांट सकते हैं। वह आनंद से जी सकते हैं। सबको आनंद दे सकते हैं।

शारीरिक सुंदरता तात्कालिक है। उम्र बढ़ते जाने से, चाहे कितनी भी सावधानी क्यों ना उपयोग करो, शारीरिक सुंदरता कम हो जाती है। लेकिन आत्म सौंदर्य शाश्वत है। उम्र बढ़ने पर भी आत्म सुंदरता की खूबसूरती कम नहीं होती है। उसकी सुगंध व्यक्ति के गुण और व्यवहार से बाहर निकलती रहती है।

शारीरिक सौंदर्य रोग और दुख का निवारण नहीं कर सकता है। लेकिन आत्म सौंदर्य रखने वाले लोग सेहतमंद और आनंदित रहते हैं। देह सौंदर्य वाले लोगों के गुण

और आदत बदलते नहीं हैं। लेकिन आत्म की सुंदरता जैसे-जैसे बढ़ती है, वैसे वैसे बुरे गुण दूर होते हैं और अच्छे गुण प्राप्त होते हैं।

चाहे शरीर कितना भी सुंदर क्यों ना हो, सत्य को पहचान नहीं पाता है। धर्म का आचरण नहीं कर पाता है। लेकिन आत्म सौंदर्य वाले लोग धर्म से अपना जीवन बिताते हैं। शक्ति का आचरण करते हैं। इसलिए सभी को आत्म सुंदरता की महानता जाननी है। आत्म सुंदरता बढ़ाने की कोशिश करनी है।

शरीर को सुंदर रखने के बारे में सबको पता है लेकिन आत्म सुंदरता के बारे में बहुत कम लोग जानते हैं। साधारण लोग नहीं जानते हैं। आत्म सौंदर्य बढ़ाने के लिए केवल एक मार्ग है। ध्यान करने से अवश्य आत्म सुंदरता बढ़ेगी। आत्मिक सौंदर्य बढ़ाने का मतलब भगवान के गुण और लक्षण प्राप्त करना है।

हमारे मन में संदेह आ सकता है कि "हमारी आंखों को शारीरिक सौंदर्य दिखाई देता है लेकिन आत्म सौंदर्य कैसे दिखाई देगा?" आत्म सौंदर्य लोगों के बात करने का तरीका, व्यवहार, उनके द्वारा किए जाने वाले कार्य से पता लगता है। लोगों के संस्कार से पता चलता है। लोगों के विचार से पता चलता है। क्योंकि आत्म सुंदरता प्राप्त करने वाले लोग बातें, कार्य, धर्म और सत्य पर निर्भर होते हैं।

उनकी कोई इच्छा ही नहीं होती है। वे सबसे प्रेम करते हैं। किसी से द्वेष नहीं करते हैं। निस्वार्थ बनकर जीवन बिताते हैं। शांति से जीवन बिताते हैं। हमेशा आनंदित और शांत रहते हैं। सुख-दुख के बारे में नहीं सोचते हैं। मान अपमान के बारे में नहीं सोचते हैं। जीव हिंसा नहीं करते हैं। सब जीव जंतु और प्राणियों की इज्जत करते हैं और प्यार करते हैं। उनके अंदर दया होती है। सबको समान देखते हैं। प्रापंचिक विषय में दिलचस्पी नहीं होती है। ध्यान साधना और ज्ञान अर्जित करने, सांसारिक सेवा करने को महत्त्व देते हैं।

ऊपर दिए गए गुण आत्म सुंदरता का प्रतीक हैं। इसलिए हमें आत्म सुंदरता को अपने अंदर पैदा करना है। उसके लिए ध्यान करना है। "आत्म सुंदरता" बढ़ाने की इच्छा रखने वाले हर व्यक्ति को ध्यान करना है। आत्म सौंदर्य से संसार स्वर्ग लगेगा। इसलिए **"देह सुंदरता पर नहीं, बल्कि आत्मिक सुंदरता पर ध्यान दीजिए"** और जानिए कि "देह सुंदरता से आत्म सुंदरता महान है"।

"दूसरों की कमियों को देखने के बजाय खुद की कमियों को सवारना है।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“ध्यान योगी लवण जैसा व्यक्ति है!”

समुद्र के पानी पर सूर्यकांति या गर्मी लगने से जिस तरह स्वाद देने वाला नमक मिलता है, उसी तरह मानव पर ध्यान और आत्म तेज लगने से ज्ञान और स्वच्छता वाली योग्यता प्राप्त होती है।

सूर्यकांति के ऊपर बादल आने से जिस तरह नमक नहीं बन पाएगा, उसी तरह आत्मा के आगे मन आएगा तो मानव योगी नहीं बन पाएगा।

सस्ता होने पर भी लवण मूल्यवान है। उसके बिना कोई भी सब्जी अच्छी नहीं बनेगी। इसी तरह, आत्म तेज जिस पर पड़ता है वह योगी बन जाता है। देखने पर सामान्य मनुष्य लगता है लेकिन फिर भी योगी अमूल्य होता है। योगी के बिना कोई जगह पवित्र नहीं होती है।

सबको नमक की तरह यानी योगी की तरह रहना है। तभी हम सभी दुखी लोगों के जीवन में आनंद ला पाएंगे। नमक डालने पर अचार बहुत दिनों तक खराब नहीं होता है। इसी तरह, जहाँ योगी रहेगा, वह स्थान बहुत सालों तक पवित्र रहेगा।

सड़ने वाले स्वभाव को नमक दूर करता है। इसी तरह, योगी समाज को सड़ने से बचाता है। समाज में हिंसा होने से बचाता है। अगर तुम नमक हो, यानी योगी हो, तो बुराई तुम्हारे आस-पास भी नहीं भटकेगी और अपने आसपास के लोगों को तुम बुराई से बचा पाओगे।

अगरबत्ती की खुशबू बहुत तीव्र होती है। थोड़े दिन के बाद खुशबू चली जाती है। लेकिन नमक की खुशबू तीव्र ना होने पर भी उसका मूल्य और स्वाद कम नहीं होता है। बहुत समय के लिए बरकरार रहता है। बार-बार उपयोग करने की जरूरत नहीं होती है। इसी तरह धन, संपत्ति और अधिकार कुछ समय तक रहता है। योगी की कीर्ति बाहर नहीं दिखाई देने पर भी अधिक दिन तक रहती है। कभी कम नहीं होती है।

नमक जैसा योगी बनने के लिए ‘श्वास पर ध्यान’ रखना है। ध्यान से बहुत सारे लोग योगी बने हैं। समाज की मदद की है। इसलिए ध्यान करना है। “नमक जैसे सुगुण प्राप्त करके योगी बनना है।”

“भगवान के बारे में जानना चाहिए!”

मानव इंद्रिय सुखों के पीछे पागल होकर उन पर ही अधिक ध्यान लगा रहा है। उनके लिए मेहनत कर रहा है। उनके लिए जी रहा है। उनका गुलाम बनकर भगवान को जानने का प्रयत्न नहीं कर रहा है। भगवान के बारे में जानने के लिए समय नहीं खर्च कर रहा है।

केवल अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए, सुख को प्राप्त करने के लिए भगवान के पास जाते हैं, उन्हें याद करते हैं। यानी अपनी जरूरत के लिए मनुष्य भगवान के पास जा रहा है। भगवान के बारे में जानने के लिए नहीं।

अपनी विलासिता के लिए बहुत सारा समय खर्च कर रहा है। धन खर्च कर रहा है। लेकिन भगवान के बारे में जानने की कोशिश नहीं कर रहा है।

अपने विवेक से मानव भगवान के बारे में जान सकता है। पहचान सकता है कि भगवान सब कुछ हैं। इस विषय को जानने से वह किसी प्राणी को हानि नहीं पहुंचाएगा और किसी की हिंसा नहीं करेगा। किसी को धोखा नहीं देगा, किसी को तकलीफ नहीं पहुंचाएगा, किसी को क्षति नहीं देगा। सबको प्यार देगा। सबकी सेवा करेगा, सबको आनंद देगा, यानी पुण्य करेगा। क्षति नहीं होगी। दुखों का सामना नहीं करना पड़ेगा। आनंदमय जीवन बिताएगा। तब धरती स्वर्ग बन जाएगी। इसलिए सबको अपना विवेक उपयोग करना है।

“बिना महत्त्व की चीजों के बारे में सोचते हैं। लेकिन सृष्टि में सबसे अधिक महत्त्व रखने वाले भगवान के बारे में नहीं सोच रहे हैं।” यही मानव के दुख और कष्ट का कारण बन रहा है। ध्यान से मानव अपने विवेक का उपयोग कर सकता है। भगवान के बारे में जान सकता है। जीवन में बहुत लाभ प्राप्त कर सकता है।

“हमारे साथ रहने वाले परम गुरु को पहचानना है!”

मूर्ख मानव सबसे महान होने वाले भगवान को, अपने साथ और अपने करीब रहने वाले भगवान को देख नहीं पा रहा है। उनकी सलाह और सूचना को ग्रहण नहीं कर पा रहा है। भगवान की बातों को नजरअंदाज करके किसी स्वामी के पास या किसी गुरु के पास जा रहा है।

इसके बारे में चिंता करते हुए मनुष्य महान होने वाले भगवान की बातें नहीं सुनता है। उनको पहचानता नहीं है। उनकी कोशिश को नहीं जानता है।

भगवान द्वारा बताई गई छोटी-छोटी बातों का पालन भी नहीं करता है। ऊपर से बड़े-बड़े विषय जानना चाहता है। छोटी बातों का पालन नहीं करने वाला, बड़ी बातें जानकर क्या ही कर लेगा? “यह आवश्यक नहीं है कि हम कितने अधिक विषय जानते हैं, बल्कि यह आवश्यक है कि हम कितने विषयों पर आचरण कर रहे हैं।” आचरण के बिना कितने भी विषय जानने से कोई फायदा नहीं होगा।

अंतरात्मा में अनंत ज्ञान है। अंतरात्मा का ज्ञान आत्मा से यानी भगवान से प्राप्त होता है। अंदर से सारे धर्म बोध किए जाते हैं। उन पर गौर करने से धर्म के बारे में पता लगेगा।

“अंतरात्मा के रूप में रहने वाले भगवान से अधिक धर्म बताने वाला कोई और नहीं है।”

अंतरात्मा को सुन पाना सबसे महान विषय है। मानव में परिवर्तन का मुख्य कारण अंतरात्मा के प्रबोध और सूचना का पालन करना है। अंतरात्मा की बात सुनने वाले बहुत विकास करेंगे। बहुत आध्यात्मिक सफलता प्राप्त करेंगे। आध्यात्मिक रूप से उन्नत शिखर तक पहुंचेंगे। वह सबको आकर्षित कर पाएंगे। उनकी बातें सब लोगों को वेद वाक्य लगेंगे। क्योंकि वेद परब्रह्म से पैदा हुए हैं। सबको अंदर से सूचित करने वाला परब्रह्म ही है। इसलिए दूसरों को महान समझते हुए किसी स्वामी जी के पीछे या ज्ञान के लिए यहाँ वहाँ ठोकर खाने से अच्छा है कि अपनी अंतरात्मा

की बात सुनें। हमारे सबसे करीब होने वाले परब्रह्म, उस भगवान, उस सद्गुरु की बातें सुनना सीखें।

इसके लिए मन शांत रहना आवश्यक है। मन को शांत कीजिए। मन के अंदर की गंदगी को निकाल बाहर कीजिए। मन के अंदर की गंदगी को जितना अधिक निकालेंगे, उतना अधिक अंतरात्मा यानी परम गुरु की बातें सुन पाएंगे और आचरण कर पाएंगे।

इन बातों का आचरण करने वाले अपने जीवन में अच्छे परिणाम हासिल करेंगे। ऊंचाई तक पहुंचेंगे। शाश्वत परिणाम प्राप्त करेंगे। महान योगी बनेंगे।

"अत्यंत समीप रहने वाले परम गुरु को नहीं पहचानने वाला परम मूर्ख होगा। अपने जीवन को क्षति में डालेगा।" इस विषय को याज्ञवल्क्य महर्षि ने "ईशावास्योपनिषद" में कहा है।

"जो आत्मा के हत्यारे हैं, यानी अपना स्वरूप होने वाले आत्म तत्व के साक्षात्कार के प्रति अनभिज्ञता प्रकट करेंगे, यानी आत्मा को नजरअंदाज करेंगे, वे मृत्यु के बाद अज्ञान के अंधकार द्वारा गिरे हुए राक्षस जन्म को प्राप्त करेंगे।"

इसको जानकर साथ रहने वाले परम गुरु को पहचानना है। ध्यान द्वारा अंतर्मुखी होने वाले अंदर के 'परम गुरु' को यानी 'आत्मा' को यानी 'भगवान' को पहचान पाएंगे। अपने जीवन को धन्य बनाएंगे। दिव्य बनेंगे। योग्यता प्राप्त करेंगे। परम पुरुष बनेंगे। ऋषि बनेंगे। महर्षि बनेंगे।

“भगवान!”

‘भगवान’ यानी ‘शक्ति’ है, अनंत ‘शक्ति’। जिस शक्ति का रूप नहीं है और जो आंखों को नहीं दिखाई देती है। इस अदृश्य शक्ति से भगवान ने दृश्य सृष्टि बनाई है। सारे जीव जंतुओं के अंदर अपनी शक्ति को डाला है ताकि वह सब अपना अपना जीवन बिना किसी कठिनाई के जी पाएं। भगवान को पता है कि किस प्राणी को कितनी शक्ति देनी चाहिए। इसलिए उन्होंने जिसे जितने शक्ति की जरूरत है, उसे उतनी शक्ति प्रदान की है। वृक्ष जाति में प्रतिक्रिया के लिए आवश्यक शक्ति को उन्होंने प्रदान किया है। इसलिए वृक्ष प्रतिक्रिया करते हैं, लेकिन एक जगह से दूसरी जगह तक नहीं जा सकते हैं। जंतु जाति में संचरण के लिए आवश्यक शक्ति भगवान ने प्रदान की है। इसलिए जानवर गति करते हैं। इसी प्रकार मानव जाति में संपूर्ण शक्ति प्रदान की है। इसलिए मानव प्रतिक्रिया, गति और विचार करते हैं।

खनिज यानी पत्थर में रहने वाले भगवान की शक्ति बहुत स्वल्प है। इसलिए पत्थर गति नहीं करते हैं। इसलिए पत्थर में बसा हुआ भगवान बहुत बहुत छोटा है। पत्थर से अधिक वृक्ष में बसे हुए भगवान की शक्ति है। वृक्ष से अधिक जानवरों में बसा हुआ भगवान बड़ा है। जानवरों से अधिक मानव में बसा हुआ भगवान बड़ा है।

पत्थर गति नहीं कर सकता है। मानव सब कुछ कर सकता है। “जिसमें भगवान की शक्ति जितनी होगी, वह उतना शक्तिशाली और बड़ा भगवान होगा”। भगवान की शक्ति के अनुसार उस जाति का कामकाज होगा। जिसके अंदर भगवान की शक्ति अधिक होती है वह अधिक महान होता है। इसलिए सृष्टि में सबसे अधिक मानव महान है। पत्थर, वृक्ष और जानवर से अधिक मानव महान है।

इसलिए पत्थर और वृक्ष में मौजूद भगवान को ‘चेतना’ कहते हैं। जानवर और मनुष्य में मौजूद भगवान को ‘आत्मा’ कहते हैं। इतना ही नहीं, जानवरों में ‘सामूहिक आत्मा’ है लेकिन मानव में ‘एकात्मा’ है। सृष्टि में मौजूद सभी प्राणियों से अधिक मानव महान है। मानव की सृष्टि अत्यंत महान है। भगवान सबमें मौजूद हैं।

चेतना के रूप में मौजूद है। जिसके अंदर चेतना है वह गति कर रहे हैं। जिसके अंदर चेतना नहीं है, गति नहीं कर रहे हैं।

इसलिए "भगवान पत्थरों में सोते हैं, पौधों में जागते हैं, जानवरों में चलते हैं और मनुष्य में सोचते हैं" कहा गया है। यानी पत्थर में मौजूद भगवान की निद्रा अवस्था से तुलना की गई है। वृक्ष में मौजूद भगवान की जागृत अवस्था से तुलना की जाती है। इसलिए वह प्रतिक्रिया करते हैं। मनुष्य में मौजूद भगवान की संपूर्ण स्थिति से तुलना की जाती है। इसलिए मानव प्रतिक्रिया, गति और विचार करते हैं। इतना ही नहीं, मानव आविष्कार भी कर सकते हैं। सारे जीवों को अपने काबू में रखना ही नहीं, बल्कि अपने लाभ के लिए उपयोग भी करते हैं। इसलिए ८४ लाख प्राणियों में केवल मानव उन्नत और शक्तिशाली हैं। सृष्टि में खनिज यानी पत्थर सबसे कम शक्ति वाली जाति है। उनका कोई अस्तित्व या चेतना नहीं है। वह गति नहीं कर सकते हैं।

साइकिल में इंजन नहीं होता है। लेकिन मोटर बाइक में इंजन होता है। मोटर बाइक से अधिक कार का इंजन शक्तिशाली होता है। कार से अधिक ट्रक का इंजन शक्तिशाली होता है। इंजन की शक्ति पर वाहन के काम करने का तरीका और वजन उठाने की शक्ति निर्भर होती है।

अगर ट्रक आकर साइकिल से कहेगा कि मैं इस वजन को उठा नहीं पा रहा हूँ, तुम आकर मेरी मदद करो, तो क्या साइकिल ट्रक की मदद कर पाएगी? जो काम ट्रक से नहीं हो रहा है, क्या वह छोटी सी साइकिल से होगा? इसलिए ट्रक को अपनी कठिनाइयाँ खुद हल करनी हैं।

इसी तरह, प्रतिक्रिया, गति और विचार करके बहुत सी चीजों का आविष्कार करने वाले मानव को कष्ट आने पर उसे मामूली से पत्थर का आश्रय नहीं लेना है। क्या एक मामूली सा पत्थर मनुष्य की समस्याएं दूर कर पाएगा?

वह पत्थर खुद बिना हिले एक जगह पड़ा हुआ है। ऐसा पत्थर तुम्हारी मदद क्या करेगा? मानव जैसे महान जन्तु की मदद मामूली पत्थर कैसे कर पाएगा? मामूली पत्थर की शक्ति कितनी होगी? मामूली पत्थर को मूर्ति का रूप देने वाले मनुष्य की शक्ति कितनी महान है। पत्थर को मूर्ति बनाने वाला मनुष्य ही है ना? पत्थर

को मूर्ति का रूप देने वाला मनुष्य ही है ना? इसलिए मानव को अपनी कठिनाइयों से खुद बाहर निकलने की कोशिश करनी है।

भगवान की सृष्टि में कम शक्ति वाला प्राणी केवल एक पत्थर है। ऐसे पत्थर की पूजा या प्रार्थना करने से कोई फायदा नहीं है। इसलिए जानना है कि भगवान किसके अंदर हैं? भगवान की शक्ति किसके अंदर अधिक है? उसके हिसाब से व्यवहार करना है। मानव को अपने से अधिक शक्तिशाली भगवान के पास जाना है। भगवान सबके अंदर आत्मा के रूप में मौजूद हैं। भगवान तक पहुंचने का केवल एक मार्ग है, वह 'ध्यान' है। भगवान अंदर होते हैं, अंदर जाने से ही हम भगवान को प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए ध्यान मार्ग से हमें अपने अंदर पहुंचना है। बाहर सब गड़बड़ है। इसलिए ध्यान कीजिए। 'आत्म साक्षात्कार' यानी 'भागवत साक्षात्कार' प्राप्त कीजिए। जीवन धन्य बनाएं।

चलिए! जागरूकता के लिए भगवान द्वारा निर्मित 'पत्थर' और भगवान का प्रतिरूप होने वाली 'आत्मा' के बीच भेद जानते हैं।

पत्थर	**आत्मा**
1) सृष्टि में सबसे कम स्तर वाला	सृष्टि में सबसे उन्नत स्तर वाली
2) घन रूपी	सूक्ष्म रूपी
3) शक्तिहीन	अत्यंत शक्तिशाली
4) संचालन नहीं कर सकता है, किसी दूसरे की शक्ति से संचालन करवाना पड़ता है।	सृष्टि की सभी चीजों को संचालित करती है।
5) प्रकाश नहीं है।	स्वयं प्रकाशित है।

6) स्थिर रहने वाला	सर्वव्यापी
7) बहुत सारे प्रकार	केवल एक प्रकार
8) परिवर्तित होता है	परिवर्तित नहीं होती है
9) अनंत नहीं है	अनंत है
10) अग्नि दहन कर सकती है, जल गीला कर सकता है, वायु हिला सकती है।	कोई कुछ नहीं कर सकता है
11) गुण है	निर्गुण है
12) निष्क्रिय है	चेतना है

'पत्थर' महान है या 'आत्मा'? यह पूछने पर हम आत्मा बोलते हैं। आत्मा के बारे में भगवद्गीता में बताया गया है कि,

श्लोक : **नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।**
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥ (भगवद्गीता : २ - २३)

तात्पर्य: आत्मा को न शस्त्र द्वारा काटा जा सकता है, न ही आग द्वारा जलाया जा सकता है, न ही जल इसे गीला कर सकता है और ना ही वायु इसे सुखा सकती है।

पत्थर की तुलना में आत्मा बहुत महान है। क्योंकि आत्मा भगवान है। इस बात को समझकर ध्यान द्वारा आत्मा की आराधना करनी है। यानी भगवान की आराधना करनी है। इसलिए पत्री जी ने विग्रह आराधना नहीं, बल्कि सत्य आराधना करने के लिए कहा है। यानी आत्म आराधना करनी है।

"अधिक श्रवण करना है, कम बात करनी है।"
-ब्रह्मर्षि पत्री जी

“जल - पत्थर!”

जब भगवान ने सबकी सृष्टि की थी तो अपनी अमोघ मेधा शक्ति से किस प्राणी की जरूरत कितनी है, किस प्राणी का स्थान क्या है, किसके लिए कितनी शक्ति चाहिए, सोचकर उसके अनुसार सबको बनाया। अपने द्वारा निर्मित प्राणियों को जितनी शक्ति चाहिए, उतनी शक्ति प्रदान की। भगवान की सृष्टि में कोई दोष नहीं है। भगवान की सृष्टि को ठीक से समझ नहीं पाने वाले मनुष्य का दोष है।

चलो भगवान की सृष्टि में जल और पत्थर के बीच अंतर समझते हैं। पत्थर से अधिक जल को शक्ति दी गई है। इसलिए पत्थर गति नहीं कर सकते हैं लेकिन जल गति कर सकता है। यानी संचार कर सकता है।

जल के पास जो संचार शक्ति है उसके कारण नदी प्रवाह में बहुत सारे पहाड़ टूटकर गिरते हैं। नदी से बांध टूट जाता है। बाढ़ के समय सड़क खराब हो जाती है। भारी वर्षा के बाद नदी प्रवाह के वेग के कारण कई सारे कष्ट और क्षति होते हैं। हम गौर कर सकते हैं कि जल की संचार शक्ति से कितनी क्षति हो रही है।

इसी तरह अगर पत्थर के अंदर संचार शक्ति होती तो, पत्थर हमेशा हिलते रहते, जिसकी वजह से कहीं ना कहीं लुढ़क जाते, जिसकी वजह से कई सारे अनर्थ होते। घर में बिछाए गए पत्थर शाम तक दिखाई नहीं देते। दीवार गायब हो जाती। मंदिर के विग्रह गायब हो जाते। जिसकी वजह से मानव को बहुत सारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता। हमेशा डरते रहना होगा कि कहीं से कोई पत्थर आकर हमारे सिर पर ना गिर जाए।

संचार करने वाले जीव जैसे कि जानवर, सांप, कॉकरोच, चूहे, मच्छर, मक्खी से मानव डर जाता है। जब पत्थर हमारे पास आकर गिरेंगे तो मानव का हाल क्या होगा?

इसलिए यह सब सोचकर भगवान ने पत्थर के अंदर संचार शक्ति बहुत कम प्रदान की है। पत्थर की शक्ति और सृष्टि में पत्थर का स्थान पता कीजिए! मानव की शक्ति और मानव की शक्ति का स्थान पता कीजिए और उसके अनुसार व्यवहार कीजिए!

“पत्थर - आत्मा!”

सृष्टि में बहुत जातियाँ हैं, जिसमें खनिज जाति, वृक्ष जाति, जंतु जाति और मानव जाति भी हैं।

इन सभी में से सबसे कम स्तर पर खनिज जाति यानी पत्थर है। पत्थर से कम स्तर का कोई नहीं है। सारी जातियाँ भगवान द्वारा निर्मित की गई हैं। सृष्टि में मौजूद सभी जातियों के जीवित रहने का और संचार करने का कारण आत्मा है। किसी के द्वारा आत्मा निर्मित नहीं की गई है। इसलिए आत्मा सबसे महान है। आत्मा से महान इस सृष्टि में कोई नहीं है क्योंकि आत्मा भगवान है। इसलिए आत्मा को ब्रह्मा भी कहते हैं। ब्रह्मा से महान इस सृष्टि में कोई नहीं है ना?

सबसे महान होने वाली ‘आत्मा’ के अलावा मानव बाकी सबके बारे में जान रहे हैं। सबके बारे में अध्ययन कर रहे हैं। लेकिन आत्मा के बारे में अध्ययन नहीं कर रहे हैं। यानी आत्मा से संबंधित ज्ञान प्राप्त नहीं कर रहे हैं। ऊपर से सबसे कम स्तर पर होने वाले पत्थर के बारे में अधिक अध्ययन कर रहे हैं। पत्थर पर अधिक श्रद्धा दे रहे हैं। पत्थर को अधिक महत्त्व दे रहे हैं।

मानव तरह-तरह के पत्थर का उपयोग कर रहे हैं। पहाड़ों के पत्थर घर बनाने के लिए, रास्ता बनाने के लिए पत्थर, प्रोजेक्ट बनाने के लिए पत्थर, ऐसे कई तरह के पत्थर का उपयोग कर रहे हैं। कुछ पत्थरों को आभूषण में लगाकर पहन रहे हैं। कुछ पत्थरों को अलंकार के लिए उपयोग कर रहे हैं। कुछ पत्थरों की मूर्तियाँ या गुड़ियाँ बनाकर बेच रहे हैं। ऐसे कुछ मूर्तियों की पूजा भी की जाती है।

मनुष्य का ध्यान आत्मा से अधिक पत्थर पर है। लेकिन महान होने वाली आत्मा पर नहीं है। जब तक मानव महान आत्मा के बारे में नहीं जानेंगे तब तक दुख में डूबे रहेंगे। जब आत्मा को महत्त्व देंगे तब मनुष्य के कष्ट दूर हो जाएंगे।

क्योंकि मानव जिन मूर्तियों को भगवान समझ रहे हैं, वह सबसे कम स्तर वाले पत्थर से बनाई गई हैं। लेकिन मानव द्वारा आराधना किए जाने वाली आत्मा है। आत्मा के बारे में पता किए बिना पत्थर की पूजा करने से कोई फायदा नहीं है। आत्मा

के बारे में जाने बिना पत्थर को भगवान समझकर पूजा करना अपने आपको भ्रम में डालता है। महान आत्मा यानी भगवान को छोड़कर निचले स्तर के पत्थर के आकार बनाकर उनकी पूजा करना व्यर्थ है।

लोग पूछते हैं कि क्या पत्थर में भगवान नहीं हैं? पत्थर में भगवान हैं, लेकिन पत्थर भगवान नहीं हैं। लोग नहीं जान पा रहे हैं कि पत्थर में भी आत्मा है। आत्मा पर श्रद्धा दिए बिना लोग पत्थर पर श्रद्धा दे रहे हैं। इसलिए उनका जीवन व्यर्थ हो रहा है।

कष्ट से बाहर निकलने के लिए आत्मा यानी भगवान को पहचानना है। आत्मा के बारे में जानना है। आत्मा से संबंधित ज्ञान प्राप्त करना है। आत्मा की महानता और विशिष्टता जानना है। आत्मा यानी सत्य दैव प्राप्त करना है। तभी मानव कष्ट से मुक्त हो सकता है।

हमेशा लोग मूर्ति को भगवान समझ बैठते हैं लेकिन जानना है कि मूर्ति "पत्थर + भगवान" है। दोनों का मिश्रण मूर्ति है। मूर्ति भगवान नहीं है लेकिन मूर्ति में भगवान हैं। आत्मा के साथ कुछ मिश्रित नहीं है। आत्मा अकेली है। आत्मा स्वच्छ और सत्य भगवान है। आत्मा संपूर्ण भगवान है। भगवान का संपूर्ण स्वरूप आत्मा है। इसलिए भगवान के संपूर्ण स्वरूप पर श्रद्धा देने वाला धन्य है। जानने वाला धन्य है। सृष्टि में मानव को दिखाई देने वाला हर रूप भगवान है लेकिन स्वच्छ भगवान नहीं है। मानव भी देह से मिश्रित भगवान है इसलिए उसे 'जीवात्मा' कहते हैं।

इसी तरह सृष्टि में दिखाई देने वाला हर कोई दैव से मिश्रित है। सृष्टि का सबसे बड़ा भगवान मानव है। सृष्टि का सबसे छोटा भगवान पत्थर है।

इसलिए आपको गौर करना है, सब कुछ पानी है लेकिन स्वच्छ पानी और नाली के पानी में अंतर है। स्वच्छ पानी आपकी सेहत के लिए अच्छा है और आपको आनंद देता है। नाली का पानी पीने से बीमार हो जाएंगे। दुखप्राप्त करेंगे। स्वच्छ पानी जैसे सत्य आत्मा को प्राप्त करना है।

यह किसी के साथ मिश्रित नहीं होती है केवल सत्य होती है। इसलिए मिश्रित रूप पर नहीं, बल्कि स्वच्छ आत्मा पर दृष्टि रखनी चाहिए। सत्य भगवान और

ब्रह्मा पर ध्यान देना है। असली ब्रह्मा सब में है। सबमें मौजूद भगवान को यानी आत्मा को इन आंखों से नहीं देख सकते हैं। लेकिन अंदर मौजूद भगवान का अंतर्मुखी बनकर दर्शन कर सकते हैं। वही मार्ग 'श्वास पर ध्यान' यानी 'ध्यान' है।

पत्थर का उपयोग करने वाले शक्तिहीन हैं। आत्मा का उपयोग करने वाले अत्यंत शक्तिशाली हैं। मानव के दो प्रकार हैं - योगी और भोगी। भोगी 'पत्थर' को महत्त्व देते हैं और योगी 'आत्मा' को महत्त्व देते हैं। **"पत्थर का उपयोग जानने से भोग प्राप्त होगा लेकिन आत्मा का उपयोग जानने से योग प्राप्त होगा।"**

पत्थर में प्रकार होते हैं। लेकिन सबके अंदर रहने वाली आत्मा केवल एक है। पत्थर शाश्वत नहीं, बल्कि आत्मा शाश्वत है। पत्थर के पास शक्ति नहीं है। संचार के लिए उसे दूसरों की मदद चाहिए। लेकिन आत्मा अपनी अनंत शक्ति से सबको संचारित करती है। पत्थर प्रकाशमान नहीं है। आत्मा प्रकाशमान है। पत्थर को अलंकार करना पड़ता है। आत्मा को अलंकार करने की जरूरत नहीं है। पत्थर को शस्त्र काट सकता है। अग्नि दहन करती है। जल गीला करता है। लेकिन आत्मा को शस्त्र नहीं काट सकता है। अग्नि दहन नहीं कर सकती है। पानी गीला नहीं कर सकता है।

इसलिए पत्थर का अध्ययन नहीं करना है। आत्मा का अध्ययन करना है। **"पत्थर से अलंकार करके आनंदित होना नहीं, बल्कि आत्मज्ञान से आनंदित होना है।"** पत्थर का नहीं, आत्मा का उपयोग करना है। पत्थर का उपयोग करने वाला शक्तिहीन है। आत्मा का उपयोग करने वाला शक्तिशाली है। इसलिए पत्थर पर नहीं, बल्कि आत्मा पर ध्यान रखना है। वह मार्ग ध्यान है। योगियों के द्वारा आचरण किया गया मार्ग है। ध्यान कीजिए। आत्मा यानी भगवान को प्राप्त कीजिए।

"मानव दानव बनकर जो करता है वह हिंसा है,
मानव दिव्य बनकर जो करता है वह अहिंसा है।"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

"प्राण प्रतिष्ठा"

पत्थर संचार नहीं कर सकता है। इसमें जान नहीं है! इसलिए पंडित पत्थर से बनाई मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा करके मंदिर में रखते हैं। तभी मूर्ति आराधना के लायक होती है। कहते हैं कि बाकी की मूर्तियाँ इस लायक नहीं हैं। इसलिए मंदिर के बाहर वाली मूर्तियाँ भगवान की होने पर भी उनकी आराधना कोई नहीं करता है। प्राण प्रतिष्ठा की गई मूर्तियों की ही आराधना और पूजा की जाती है।

प्राण प्रतिष्ठा क्या है? प्राण प्रतिष्ठा यानी मूर्ति में प्राण की प्रतिष्ठा करना। यानी मूर्ति में जान डालना। यानी पत्थर से बनाई गई मूर्ति में मंत्र द्वारा जान डालना।

हर विषय की तरह इस विषय में भी थोड़ा दिमाग लगाना पड़ेगा। प्राण प्रतिष्ठा करने का मतलब क्या है? आकार दी गई मूर्ति के अंदर प्राण नहीं हैं ना? प्राण डालने के कारण भगवान हैं ना?

सोचने पर पता लगेगा कि प्राण भगवान हैं, लेकिन मूर्ति नहीं। जब प्राण डाला जाता है तब विग्रह पवित्र होता है, तो प्राण होने वाला हर प्राणी पवित्र है ना! लेकिन क्या हम सबको पवित्र नजर से देख रहे हैं?

मूर्ति के रूप अलग होने पर भी सबमें डाला गया प्राण समान है! यानी सारे विग्रह में समान प्राण है! यानी सारे भगवान समान हैं! लेकिन हम केवल एक भगवान को यानी एक रूप को पसंद कर रहे हैं। दूसरे रूप यानी दूसरे भगवान से द्वेष क्यों कर रहे है? एक तरफ कहा जा रहा है कि प्राण भगवान हैं। दूसरी तरफ रूप को भगवान मान रहे हैं।

सोचिए! असल प्राण प्रतिष्ठा हुई है? या केवल मंत्र पढ़े गए हैं? कैसे पता चलेगा की मूर्ति में प्राण डाला गया है या नहीं? कैसे जानना है? केवल मंत्र है या कोई और बात है? क्या कोई सबूत है?

प्राण प्रतिष्ठा करके प्राण डालने पर भी मूर्ति संचार क्यों नहीं कर रही है? जान होने वाला हर प्राणी संचार करता है ना? लेकिन मूर्ति क्यों नहीं संचार कर रही है? यहाँ सोचने वाली बात है। कहा जा रहा है कि प्राण डाला गया है। और केवल प्राण डालने के बाद ही मूर्ति आराधना के काबिल है! यानी पहले मूर्ति में प्राण नहीं था ना? स्वीकार किया जा रहा है कि पहले मूर्ति में प्राण नहीं था। प्राण प्रतिष्ठा से पहले मूर्ति

में भगवान नहीं थे। इसका अर्थ प्राण प्रतिष्ठा ना करने वाली मूर्तियों में और पत्थर में प्राण नहीं हैं ना? यानी प्रतिमा, विक्रम, मिट्टी से बनाए गए चित्रों में प्राण नहीं हैं ना? उनमें भगवान नहीं हैं ना? लेकिन उनकी आराधना क्यों की जा रही है?

जब प्राण भगवान हैं तो प्राण होने वाला हर जीव भगवान होता है ना? ऐसे समय में प्राण ना होने वाले विग्रह में प्राण डालकर उसकी आराधना क्यों की जा रही है? इसके बजाय जीवित प्राणियों की आराधना कर सकते हैं ना? प्राण होने वाला भगवान होता है ना? फिर सारे जीवों की आराधना क्यों नहीं की जाती है? क्यों लोग द्वेष करते हैं? जब प्राण डाला गया पत्थर आराधना के लायक हो सकता है तो पहले से प्राण होने वाला प्राणी क्यों आराधना के लायक नहीं हो सकता है?

असल भगवान विग्रह के अंदर कैसे आएगा? कहाँ से आएगा? अगर भगवान एक विग्रह में आएगा तो बाकी के विग्रह में कौन होगा? इन सब प्रश्नों को दिमाग लगाकर सोचना है। कहा जाता है कि भगवान का विसर्जन किया गया है, विसर्जन करने पर भगवान कहाँ जाता है? इन सबके बारे में हमें सोचना है ना? भगवान कहीं नहीं जाता है, क्योंकि वह सर्वव्यापी है, हर जगह मौजूद रहता है।

मंत्र से प्राण डालने वाले, मृत लोगों के अंदर प्राण डालकर उन्हें जीवित कर सकते हैं ना? लेकिन ऐसा क्यों नहीं करते हैं? इससे हमें समझ आता है की प्राण प्रतिष्ठा जैसा कुछ नहीं होता है। हमें समझ आता है कि मंत्र से प्राण डाला नहीं जाता है।

सोचिए! पत्थर और मूर्ति को नहीं, बल्कि जीवित भगवान की इज्जत कीजिए। जीवित जंतुओं से प्रेम कीजिए। उनकी हिंसा ना कीजिए। उनका भक्षण मत कीजिए। प्राण होने वाले भगवान की पूजा कीजिए। असली भगवान की आराधना कीजिए। कष्ट उठाकर भगवान की मूर्तियाँ बनाने की जरूरत नहीं है। मंत्र से प्राण डालने की जरूरत नहीं है। बहुत सारे जीवित प्राणी धरती पर मौजूद हैं। जानिए कि वह सब भगवान हैं। किसी की जान मत लीजिए।

बलि के नाम पर बहुत सारे जानवरों की हत्या की जा रही है। जानदार प्राणियों की जान लेकर क्या मिलेगा? जिसमें जान नहीं है उसमें जान डालकर क्या मिलेगा? जिसके अंदर जान है उसकी जान क्यों निकाल रहे हो और जिसके अंदर

जान नहीं है उसके अंदर जान क्यों डाल रहे हैं? जिसके अंदर प्राण है उसकी इज्जत करो। हिंसा मत करो।

जिसे रूप नहीं दिया गया उसे पत्थर कहा जाता है। रूप देने पर शिल्प कहा जाता है। मंत्र पढ़ने पर मूर्ति कहा जाता है। पूजा करने पर भगवान कहा जाता है। जो भी करो वह केवल एक पत्थर ही है ना!

पत्थर पत्थर ही है। भगवान कैसे बनेगा? क्या आपके बेटे को कृष्ण के कपड़े पहनाने से वह कृष्ण बन जाएगा? कृष्ण की शक्तियाँ उसके अंदर आ जाएंगी? भगवद्गीता का बोध कर पाएगा? संभव नहीं है ना?

इसी तरह कितनी भी कोशिश कर लो, कितने भी अलंकार कर लो, पत्थर पत्थर ही होता है, भगवान नहीं!

वेमना योगी ने कहा है,

शिललनु चूसि नरुलु शिवुडनी भाविन्तृ
शिललु शिलले कानि शिवुडु काडु
तनदु लोनीशिवुडु तानेला तेलियाडो
विश्वदाभीरामा विनुरावेमा।

तात्पर्य : वेमना कह रहे हैं कि "पत्थर को देखकर मानव भगवान मान रहे हैं। पत्थर पत्थर होते हैं, भगवान नहीं। अपने अंदर के भगवान को मानव क्यों नहीं देख रहे हैं?"

श्री वीर ब्रह्मेंद्र स्वामी ने कहा है,

"मुक्कु मोगमु चक्की मूर्तिं पूजालु चेया
तोलत चेयु दोसागु तोलगाबोदु
मानसु नीलुप जानना मारणालु तोलगुनु
कलिकांबा! हंसा! कलिकांबा!"

तात्पर्य : श्री वीर ब्रह्मेंद्र स्वामी कह रहे हैं, "पत्थर और लकड़ी पर चेहरा बनाकर, शिल्प बनाकर उसे तिलक लगाकर, वस्त्र पहनाकर, फूल लगाकर, अगरबत्ती जलाकर आरती देने से या कितनी भी पूजा करने से पूर्व पाप दूर नहीं होंगे।"

वीर ब्रह्मेंद्र स्वामी बता रहे हैं कि "जन्म और मरण मन लगाकर ध्यान करने से दूर होते हैं, पूजा करने से नहीं। पूजा से कोई फायदा नहीं है।"

वीर ब्रह्मेंद्र स्वामी बता रहे हैं कि जन्म और मरण पूजा करने से नहीं, बल्कि मन लगाकर ध्यान करने से दूर होते हैं। पूजा करने से कोई फायदा नहीं है।

"साटी मानवुनकु सयम्मु पडबोक
नल्ल राल्लु तेच्चि गुल्लु कट्टी
म्रोक्कुलिडीन ब्रतुकु चक्कपडम्बोदु
कलिकांबा! हंसा! कलिकांबा!"

तात्पर्य : हम खुद काले पत्थर लाकर, मंदिर में रखकर, हमारी कठिनाइयों को दूर करने की प्रार्थना करेंगे तो क्या हमारे जीवन में सुधार आएगा? जीवन को सुधारने के लिए अन्य मनुष्यों की मदद करनी चाहिए। यानी वीर ब्रह्मेंद्र स्वामी अच्छा काम करने के लिए हमारी बोधना कर रहे हैं।

"रूपा रहितुनकु रूपम्मु गलपिन्ची
कर्मा कांडा पेंचि कलुशमतुलु
धर्ममार्गम्मुलनु ध्वंसम्मु चेसिरि
कलिकांबा! हंसा! कलिकांबा!"

तात्पर्य : वीर ब्रह्मेंद्र स्वामी रूप ना होने वाले भगवान को रूप देकर, कर्मकांड करके, निद्रा ना लेने वाले भगवान की सेवा करते हुए, सुप्रभात नींद से जगाकर, पवित्र भगवान को अभिषेक करते हुए, मरण, जीवन, भूख ना होने वाले भगवान को निवेदन करते हुए, बहरे ना होने वाले भगवान के मंदिर में माइक लगाकर जोर-जोर से आवाज से दूषित हृदय वाले लोग भगवान के पवित्र दर्शन मार्ग को यानी 'ध्यान मार्ग' को व्यर्थ कर रहे हैं। इसलिए हमें समझना है कि 'प्राण प्रतिष्ठा' करने से भगवान उपस्थित नहीं हो जाते हैं। प्राण होने वाली हर चीज भगवान है। ध्यान करके आपके अंदर उपस्थित शिव यानी अपनी आत्मा की आराधना कीजिए। धन्य हो जाइए।

"भगवान पसंद हैं?"

सब लोग कहते हैं कि भगवान उनको पसंद हैं। लेकिन लोग ठीक से समझते नहीं हैं कि बहुत पसंद किसे करते हैं।

चलो मानते हैं कि भगवान आपको पसंद हैं, लेकिन क्यों पसंद हैं? भगवान को पसंद करने की बात आप किस आधार पर कह रहे हैं? किसके कारण आप भगवान से प्रेम करते हैं?

क्या पूजा और प्रार्थना भगवान को पसंद करने के समान हैं? भागवत स्मरण करना भगवान को प्रसन्न करने के समान है? लोग "भगवान हमें पसंद हैं... पसंद हैं..." कहते रहते हैं, लेकिन सच तो यह है कि लोग हमेशा अपनी पसंद के बारे में सोचते हैं, लेकिन भगवान की पसंद के बारे में नहीं सोचते हैं।

हमेशा अपने मनपसंद रास्ते पर चलते हैं, लेकिन लोग कभी नहीं सोचते हैं कि हम भगवान के मनपसंद रास्ते पर चलने की कोशिश कर रहे हैं या नहीं?

लोग कहते हैं कि भगवान उन्हें पसंद हैं लेकिन वह सोच नहीं रहे हैं कि भगवान उन्हें पसंद कर रहे हैं या नहीं? भगवान को पसंद करना काफी नहीं है। भगवान के मनपसंद बनना आवश्यक है। तभी हमारा जीवन धन्य होगा। इसलिए अपना मनपसंद कार्य नहीं, बल्कि भगवान के मनपसंद कार्य करने हैं। तभी भगवान के करीब होंगे। सचमुच भगवान को चाहने वाले, स्वयं को भगवान की पसंद बनाने में जुटे रहते हैं। भगवान के प्रीति पात्र बनने के लिए क्या करना है?

भगवान के प्रीति पात्र बनने के लिए ध्यान करना है। ध्यान करने का मतलब भगवान के तत्व को समझकर उसके अनुसार व्यवहार और आराधना करना है। यही भगवान को पसंद है।

"प्रकृति की रक्षा करना स्वयं की रक्षा करने के समान है।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

"भक्तों के प्रकार!"

दुनिया में भक्त तीन प्रकार के हैं :-

(1) भगवान द्वारा प्राप्त होने वाली चीजों को पसंद करने वाले

(2) भगवान को पसंद करने वाले

(3) भगवान द्वारा पसंद किए जाने वाले

इन तीन प्रकारों में पहले प्रकार वाले अधिक प्रतिशत होते हैं। दूसरे प्रकार वाले थोड़े प्रतिशत होते हैं। लेकिन तीसरे प्रकार वाले बहुत कम होते हैं। तीसरे प्रकार वाले लोग बहुत महान और भाग्यवान होते हैं।

पहले प्रकार वाले यानी "भगवान से प्राप्त होने वाली चीजों को पसंद करने वाले" यानी भगवान से इच्छाएं मांगने वाले। इन्हें भगवान से अधिक भगवान द्वारा प्राप्त होने वाली चीजें पसंद होती हैं, लेकिन भगवान से अधिक प्रेम नहीं होता है। इसलिए मांगी गई चीजें ना मिलने पर वह अपने भगवान की तस्वीर को बदलते रहते हैं। कुछ बार धर्म भी बदलते रहते हैं। ऐसे लोगों को भला भगवान कैसे पसंद कर सकते हैं? जब इन्हें भगवान पसंद नहीं हैं तो भगवान इन्हें कैसे पसंद कर सकते हैं?

ऐसे लोग अपने पिता को नहीं, बल्कि अपने पिता द्वारा मिलने वाली संपत्ति से प्रेम करने वालों के समान होते हैं। क्या ऐसे लोगों के दुख दूर हो सकते हैं? कभी नहीं।

दूसरे प्रकार के भक्त - इनकी इच्छा ही नहीं होती है। यह भगवान से आने वाली चीजें नहीं, बल्कि भगवान को पसंद करते हैं। इन्हें भगवान पसंद हैं, लेकिन यह भी भगवान की पसंद नहीं बन सकते हैं।

केवल तीसरे प्रकार के भक्त हैं जो भगवान के प्रीति पात्र बन सकते हैं। यही सबसे अधिक भाग्यवान हैं। यह लोग भगवान के प्रीति पात्र कैसे बने हैं? इन्होंने क्या करके भगवान के दिल में जगह बनाई है? चलिए छोटी सी कहानी द्वारा पता करते हैं!

त्रिलोक संचारी होने वाले नारद महर्षि एक बार वैकुंठ गए जहाँ उन्होंने विष्णु मूर्ति को एक पुस्तक पढ़ते हुए देखा और पूछा, "यह कौन सी पुस्तक है?" तुरंत

विष्णु मूर्ति ने जवाब दिया, "यह मुझे पसंद करने वाले लोगों की सूची है।" नारद महर्षि को संदेह हुआ कि क्या उसमें उनके स्वयं का नाम है या नहीं? देखने के बाद पता लगा कि इस किताब में सबसे पहला नाम नारद महर्षि का था।

नारद महर्षि को तुरंत संदेह हुआ कि आंजनेय स्वामी का नाम कहाँ है? लेकिन सारी किताब छान मारने पर भी उन्हें आंजनेय स्वामी का नाम नहीं मिला। नारद महर्षि बहुत खुश हुए। वह खुद को आंजनेय स्वामी से अधिक महान समझने लगे।

वहाँ से लौटने के बाद नारद महर्षि फिर से लोक संचार करने लगे। ऐसे घूमते समय एक बार उन्होंने आंजनेय स्वामी को ध्यान करते हुए देखा। तुरंत नारद उनके पास गए और सब कुछ उन्हें बता दिया। उन्होंने बताया कि उन्हें पता नहीं लग रहा है कि किसलिए आंजनेय स्वामी का नाम उस किताब में नहीं है। तभी आंजनेय स्वामी ने नारद महर्षि से पूछा कि "स्वामी! बताइए कि क्या आप ठीक हैं? आपके कुशल मंगल से अधिक मुझे और क्या चाहिए।" कहकर आंजनेय स्वामी वापस ध्यान में चले गए।

एक बार फिर से नारद महर्षि को वैकुंठ जाना पड़ा। इस बार विष्णु के हाथ में एक और किताब थी। नारद ने पूछा कि यह किताब क्या है? उन्होंने जवाब दिया, "मेरे प्रीति पात्र लोगों की सूची है"। देखने के बाद पता चला कि इस किताब में सबसे पहले आंजनेय स्वामी का नाम था, लेकिन नारद का नाम नहीं था। यह देखने के बाद नारद महर्षि बहुत दुखी हुए। उन्हें कारण समझ नहीं आया।

गौर करने पर पता चलेगा कि, "भगवान को पसंद करने वाले लोगों" की सूची में नारद महर्षि का नाम है, लेकिन "भगवान द्वारा पसंद किए जाने वाले लोगों" की सूची में नारद महर्षि का नाम नहीं है। लेकिन आंजनेय स्वामी का नाम है। थोड़ी गहराई से सोचने पर पता लगेगा कि भगवान द्वारा प्राप्त होने वाली चीजों को चाहने वाले लोगों की सूची ही भगवान के पास नहीं है। इसका पीछे का कारण भगवद्गीता में बताया गया है। कृष्ण भगवान ने 'निष्काम कर्म' करने को कहा है। यानी किसी भी

काम को करने के बाद परिणाम की आशा नहीं करनी है। इच्छाएं मांगने का अर्थ, किए गए कार्य के परिणाम की आशा करने के समान है ना?

श्लोक : **कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।**

मा कर्मफलहेतुर्भुर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि॥ (भगवद्गीता : २ - ४७)

तात्पर्य : कर्म करने का तुम्हें अधिकार है, लेकिन उसके परिणाम का नहीं है।

इसका अर्थ इच्छा नहीं मांगना है। इसमें इच्छा ना मांगने के बारे में भगवान द्वारा स्पष्ट रूप से बताया गया है। जिस चीज को भगवान ने मना किया है, उसे करने से क्या हम भगवान के प्रिय पात्र बन सकते हैं? भगवान के प्रिय पात्र की सूची में आ सकते हैं?

नारद महर्षि, जो इच्छाएं नहीं मांगते हैं, वही भगवान के 'प्रिय पात्र' की सूची में नहीं हैं! क्योंकि नारद भी भगवान के तत्व और शक्ति को समझे बिना अपने मनपसंद पारायण, स्रोत और कीर्तन गाते रहते हैं। लेकिन भगवान को मनपसंद होने वाले आत्म तत्व को समझकर उसके अनुसार व्यवहार और आराधना नहीं कर रहे हैं। इसलिए भगवान को पसंद करने वालों की सूची में हैं, लेकिन भगवान द्वारा पसंद किए जाने वाले लोगों की सूची में नहीं हैं। लेकिन आंजनेय स्वामी भगवान के निर्गुण, निराकार और आत्म तत्व को जानकर अपने अंदर होने वाले भगवान पर ध्यान द्वारा श्रद्धा दे रहे हैं। अंतर्मुखी बनकर बिना किसी चिंता के यानी विचार के भगवान पर श्रद्धा करके निरंतर ध्यान साधना कर रहे हैं। उनके मन में इसके अलावा कोई दूसरा विचार नहीं है। उनकी श्रद्धा हमेशा भगवान पर होती है। इसलिए आंजनेय स्वामी यानी हनुमान भगवान के पसंदीदा भक्त बने हैं।

इसी तरह, सभी तरह की चिंताएं यानी संसार, पैसा, समस्या से संबंधित चिंताएं छोड़कर जो भगवान पर श्रद्धा रखेंगे यानी ध्यान करेंगे वह भी भगवान के प्रिय पात्र बन सकते हैं। इस कहानी द्वारा हमें समझ आता है कि ध्यान के अलावा कोई दूसरी आराधना करने से हम भगवान के प्रिय पात्र नहीं बन सकते हैं।

यही बात गीता में भी श्री कृष्ण भगवान द्वारा बताई गई है,

श्लोक : **अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।**
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।। ९ - २२।।

तात्पर्य : अनन्य भाव से मेरा चिंतन करते हुए जो भक्तजन मेरी ही उपासना करते हैं, उन नित्ययुक्त पुरुषों का योगक्षेम मैं वहन करता हूँ।

इसके द्वारा हमें पता लगता है कि जो भक्त बिना किसी चिंता के यानी बिना किसी इच्छा के भगवान पर ध्यान रखेंगे, उनका ध्यान भगवान रखेंगे। भगवान पर ध्यान रखने का मतलब मूर्ति या तस्वीर पर ध्यान रखना नहीं है। भगवान के नाम या मंत्र पर ध्यान करना नहीं है, क्योंकि भगवान नाम और रूप रहित हैं। यानी भगवान का कोई नाम और रूप नहीं है। भगवान सत्य आत्मा का स्वरूप हैं। ऐसे भगवान पर ध्यान द्वारा श्रद्धा रखनी है। हमेशा भगवान की नजर में रहना है। वही भगवान के प्रिय पात्र बनेंगे। भगवान के अलावा बाकी सभी चीजों पर ध्यान रखने वाले भगवान के प्रिय पात्र कैसे बन सकते हैं?

भगवान ने गीता में बताया है ना, 'आत्मा' ही मैं हूँ।

श्लोक : **अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।**
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च ।। १० - २०।।

तात्पर्य : हे गुडाकेश (निद्राजित्)! मैं समस्त भूतों के हृदय में स्थित सबकी आत्मा हूँ, तथा संपूर्ण भूतों का आदि, मध्य और अंत भी मैं ही हूँ।

यहाँ एक विषय सबको याद रखना है, वह यह है कि 'आत्मा' ही भगवान है और 'आत्म आराधना' ही भागवत आराधना है। आत्मा पर ध्यान रखना भगवान पर ध्यान रखने के समान है। आत्मा पर ध्यान रखने वाला ही भगवान की नजर में रहेगा। भगवान की नजर में रहने वाला ही भगवान का प्रिय पात्र बनेगा। ऊपर दिए गए विषय से हमें पता चलता है कि 'अन्य चिंतन के बिना केवल ध्यान द्वारा आत्मा पर दृष्टि रखने वाले हनुमान भगवान के प्रिय पात्र बने हैं। इसी तरह, जो ध्यान करेंगे, वह भगवान के प्रिय पात्र बनेंगे। भगवान के पसंदीदा लोगों से अधिक भाग्यवान और महान इस दुनिया में कोई नहीं है। इसलिए ध्यान कीजिए और भगवान के प्रिय पात्र बनिए।

"विशेषताएं!"

कुछ लोग विशेष वस्त्र धारण करते हैं। कुछ लोग बिंदी लगाते हैं। कुछ लोग कान में फूल रखते हैं। कुछ लोग गले में हार और हाथ में कड़ा या ताबीज पहनते हैं और मानते हैं कि यह सब भगवान को पसंद है।

ऐसी विशिष्ट शैली रखकर लोग व्यक्त करते रहते हैं कि वे किसी विशिष्ट धर्म या जाति के हैं। ऐसी वेशभूषा से कुछ लोग अपने कुल को व्यक्त करते रहते हैं। अपने नाम के आगे अपना कुल नाम जोड़कर व्यक्त करते हैं कि वे विशिष्ट कुल के लोग हैं।

लेकिन इस तरह अपने आप में विशेषता दिखाना और व्यक्त करना भगवान की महत्त्वाकांक्षा के खिलाफ है। भगवान की अपेक्षा के अनुसार भगवान के लिए सब लोग समान हैं। धरती पर भेजते समय भगवान ने सबको एक प्रकार से और सामान रूप से भेजा है। क्योंकि भगवान की नजर में सब लोग समान होते हैं। इसलिए भगवान अपने भक्तों के बीच भेद नहीं करते हैं। इसलिए भगवान को आपस में भेद व्यक्त करने वाले लोग पसंद नहीं हैं। भगवान ने किसी मनुष्य को बिंदी लगाकर नहीं भेजा है। किसी दूसरे को बुर्का पहनाकर नहीं भेजा है। किसी दूसरे को स्वर्ण आभूषण पहनाकर नहीं भेजा है। किसी दूसरे को फटे हुए वस्त्र पहनाकर नहीं भेजा है। लोगों को विशिष्ट नाम देकर नहीं भेजा है। यह सारी चीजें हमने बनाई हैं। "यह सारी चीजें खुद पैदा नहीं हुई हैं। इन्हें हमने पैदा किया है।"

इसलिए भेदभाव दिखाने से भगवान खुश नहीं होते हैं, बल्कि गुस्सा होते हैं, क्योंकि ऐसा करने वाले लोग भगवान की अपेक्षा के खिलाफ काम करते हैं। भगवान के लिए सारी मानव जाति समान है। भगवान को किसी के प्रति अनुराग या द्वेष नहीं है।

पूजा करने वाले, पूजा ना करने वाले, बिंदी लगाने वाले, बिंदी नहीं लगाने वाले, ताबीज बांधने वाले, ताबीज नहीं बांधने वाले, धर्म के नाम का बोर्ड लगाने वाले, नहीं लगाने वाले, किसी के बीच में भगवान भेद नहीं करते हैं। इसलिए किसी को विशिष्ट नजर से नहीं देखते हैं। भगवान की महत्त्वाकांक्षा के विरुद्ध कार्य नहीं करना है। ग्रहण करना है कि सारी मानव जाति समान है। उसके अनुसार व्यवहार करना है। तभी सब भगवान के प्रिय भक्त हो सकते हैं।

“मूर्ति किसलिए है?”

लोग कहते हैं कि “भगवान की मूर्ति से भगवान के उपस्थित होने का सच पता लगता है। बिना मूर्ति के, भगवान उपस्थित हैं या नहीं कैसे पता लगेगा? मूर्ति की वजह से भगवान के उपस्थित होने के बारे में जानने से हमें फायदा ही तो है ना?”

लेकिन सोचने पर पता चलेगा कि मूर्ति केवल भगवान के उपस्थित होने का विषय बताती है। इससे अधिक क्या बताती है? कुछ नहीं बताती है ना? दुनिया में सब लोग भगवान को उनकी मूर्ति से जानते हैं। मूर्ति के द्वारा लोगों को सिर्फ इतना पता चलता है कि “भगवान मंदिर में मूर्ति के रूप में उपस्थित होते हैं। भगवान की मूर्ति को फल-फूल समर्पित करने से भगवान उनकी इच्छाएं पूरी करेंगे।” इससे अधिक लोग भगवान की मूर्ति से कुछ नहीं जान पाते हैं। इसके परे, एक मानव को मूर्ति से क्या पता चलता है?

यानी भगवान कैसे होते हैं? कहाँ होते हैं? क्या करते हैं? यह सब जाने बिना लोग जीवन बिताते हैं। इन सबके बारे में जानने की कोशिश भी नहीं करते हैं।

‘भगवान केवल मंदिर में रहते हैं। मूर्ति ही भगवान है।’ मानते हुए केवल मंदिर में भगवान की मूर्ति के आगे लोग पवित्र रहते हैं। बाहर जाने के बाद पाप करते हैं। मंदिर में पवित्र व्यवहार करके, बाहर जाकर पापी व्यवहार करने के पीछे का कारण यह है कि लोगों का मानना है कि भगवान केवल मंदिर में उपस्थित हैं, बाहर कहीं नहीं। जहाँ भगवान उपस्थित नहीं हैं वहाँ पाप कर रहे हैं, जिसके परिणाम में दुख और दर्द का सामना कर रहे हैं।

मानव के कष्ट और दुख का कारण क्या है? उनके द्वारा किए गए पाप ही हैं ना? पाप क्यों कर रहे हैं? क्योंकि वे मान रहे हैं कि मंदिर के बाहर कहीं भगवान नहीं हैं! और मान रहे हैं कि भगवान उन्हें नहीं देख रहे हैं! लोग ऐसा क्यों मान रहे हैं? क्योंकि वह नहीं जानते हैं कि भगवान सर्वव्यापी हैं और मंदिर के बाहर भी हर जगह उपस्थित हैं। लोग मूर्ति को भगवान मानते हैं, लेकिन भगवान सर्वव्यापी हैं। ऐसे में क्या मूर्ति ने हमारे लिए अच्छा किया है? या हमारे लिए अधिक दुख लाई है?

भगवान के सर्वांतर्यामी और सर्वव्यापी होने का संदेश मूर्ति द्वारा दिया जाएगा तो मानव सब जगह पवित्र व्यवहार करेंगे। पाप नहीं करेंगे। पाप नहीं करने से दुख नहीं होगा ना? क्या यह संदेश और ज्ञान मूर्ति द्वारा मानव तक पहुंचता है? इसका जवाब 'नहीं' है।

हमेशा मूर्ति द्वारा भगवान के उपस्थित होने का संदेश मिलता है, लेकिन भगवान के बारे में ज्ञान नहीं मिलता है। अपने मनपसंद भगवान के बारे में ज्ञान प्राप्त नहीं करने की वजह से ही मानव को दुख का सामना करना पड़ता है। इसलिए दुनिया दुख से भरी पड़ी है।

इसलिए केवल मंदिर में रखने से फायदा नहीं है, मूर्ति के पास आने वाले लोगों को भगवान की शक्ति, सृष्टि, नियम और धर्म के बारे में बताना आवश्यक है। सब कुछ जानकर इसके अनुसार पवित्र और धर्म मार्ग पर जीवन गुजारने से ही मानव जीवन सार्थक और आनंदमय होता है। मूर्ति द्वारा भगवान के बारे में अच्छा और सही ज्ञान मानव तक पहुंचाना है। ऐसा नहीं होगा तो मानव को क्षति होगी।

समाज के अनुसार भगवान केवल मंदिर में होते हैं, मूर्ति के अंदर होते हैं और मूर्ति आराधना ही भगवान की आराधना है। ऐसा मानने के पीछे का कारण बचपन से बड़ों द्वारा सिखाया गया ज्ञान है। हमें समझ आता है कि बड़ों ने ही बच्चों के मन में यह सब डाला है। इसके बारे में नीचे दिए गए कुछ विषय द्वारा हम जान पाएंगे।

मंदिर में बड़े लोग बच्चों से कहते हैं कि "आवाज मत करो, गंदी बातें मत करो, यह मंदिर है।" बड़ों का मतलब है मंदिर में भगवान होते हैं इसलिए मंदिर में कोई गलत काम नहीं करना चाहिए। ऐसा कहने का मतलब यह है कि "मंदिर में भगवान होते हैं इसलिए यहाँ कोई गलत काम नहीं करना चाहिए और बाहर जाकर जो करना है, हम कर सकते हैं!" इसलिए लोग केवल मंदिर में पवित्र व्यवहार करते हैं। बाहर भगवान को अनुपस्थित मानते हुए पापी कार्य करते हैं। बड़ों को बच्चों से कहना चाहिए कि पापी काम कभी नहीं करने हैं, चाहे वह मंदिर के अंदर हों या बाहर। मंदिर के अंदर गलत करना और मंदिर के बाहर सही करना इसका आंतरिक अर्थ देते हुए बड़ों को बात नहीं करनी है।

सोचने पर पता लगेगा कि बड़ों का डांटना भगवान का केवल मंदिर में उपस्थित और बाहर अनुपस्थित होने का संकेत देता है।

यही विचार बड़े बच्चों के मन में भी डालते हैं। अब कहिए क्या मूर्ति से मानव को कुछ फायदा है? इसलिए, बड़ों के द्वारा नियमित किया गया कोई भी रीति रिवाज बच्चों के लिए अच्छा करने वाला होना चाहिए और मानव जीवन को पवित्र बनाने वाला होना चाहिए।

बहुत से लोग मंदिर जाने वाले दिन जीव हिंसा नहीं करते हैं। मांस का भक्षण नहीं करते हैं। बाकी के सारे दिन मांस खाते हैं क्योंकि वे मानते हैं कि मंदिर में भगवान होते हैं। केवल मंदिर जाने वाले दिन वे मांस भक्षण नहीं करते हैं क्योंकि वे भगवान को मंदिर में उपस्थित और बाकी सभी जगह अनुपस्थित मानते हैं। अगर सच में मांस भक्षण पाप नहीं है तो मंदिर में जाने वाले दिन क्यों मांस भक्षण नहीं करते हैं? क्योंकि सब लोग 'मूर्ति को भगवान, मंदिर को भगवान के उपस्थित होने की जगह मानते हैं ना?'

इसलिए, मंदिर जाने वाले लोगों को ज्ञान देना चाहिए कि भगवान सर्वांतर्यामी हैं। वह केवल मूर्ति में ही नहीं, बल्कि हर जगह होते हैं। सभी जीवों में होते हैं। सबके अंदर इसके बारे में जागरूकता पैदा करनी है और जीव हिंसा करने से रोकना है। इतना ही नहीं, सच्चे भागवत दर्शन के लिए सभी को अंतर्मुखी बनने के लिए कहना है। थोड़े समय ध्यान करने के लिए कहकर सभी से थोड़े समय तक मंदिर में ध्यान कराना है। सभी मंदिरों में ध्यान मंदिर की व्यवस्था करनी है। सभी को पवित्र बनाना है। तब मूर्ति से कुछ फायदा हासिल होगा।

यही पूर्व जमाने का रीति रिवाज हुआ करता था। इसलिए सब लोग मंदिर से थोड़ी देर बाहर आकर ध्यान करते थे, लेकिन अब केवल रीति रिवाज बन गया है। लोग थोड़ी देर बैठकर चले जाते हैं, लेकिन ध्यान नहीं करते हैं। कम से कम अब से हर किसी को मंदिर जाने के बाद, मूर्ति के दर्शन के बाद, थोड़ी देर बैठकर ध्यान करना है। सब लोगों से ध्यान करवाना है। मंदिरों को ध्यान मंदिर के रूप में परिवर्तित कीजिए।

"विग्रह आराधना के कारण?"

संसार में विग्रह आराधना मुख्यतः तीन कारण से करते हैं :-

(1) कुछ लोग मूर्ति को भगवान मानते हुए आराधना करते हैं।

(2) कुछ लोग मूर्ति के अंदर भगवान के उपस्थित होने को मानते हुए आराधना करते हैं।

(3) कुछ लोग मूर्ति की आराधना भगवान की आराधना के समान मानते हुए करते हैं।

इस तरह, हर कोई अपनी अपनी भावना के आधार पर मूर्ति आराधना करता है। सब लोग भावना को प्रमुखता दे रहे हैं लेकिन क्या मूर्ति आराधना भागवत आराधना है? कौन सी आराधना सच्ची भागवत आराधना है? ऐसा कोई नहीं सोच रहा है। इसलिए चलिए इसके बारे में स्पष्ट रूप से समझते हैं।

(1) क्या मूर्ति भगवान है?

मूर्ति को भगवान मानने वाले लोग बहुत सारे हैं। इसका मुख्य कारण उनको बचपन से ऐसा सिखाया जाना है। इसलिए लोग उसी भावना से हैं। इसलिए मूर्ति का दर्शन करना, भगवान का दर्शन करने जैसा मानते हैं। इसलिए लोग मूर्ति का दर्शन करके आने के बाद कहते हैं, आज मेरा मूर्ति दर्शन अच्छा हुआ है। इतना ही नहीं, आज मेरा भागवत दर्शन अच्छा हुआ है कहते हैं। इनके कहने के मतलब में पता चलता है कि यह मूर्ति को भगवान मानते हैं। इसके परे वह कुछ नहीं सोचते हैं।

दिमाग लगाकर सोचने पर पता चलेगा, लेकिन लोग नहीं सोचते हैं। लोग नहीं समझते हैं की मूर्ति केवल मूर्ति होती है, भगवान नहीं। भगवान का कोई रूप नहीं होता है, इसलिए हमारे बड़ों ने अपनी कल्पना के आधार पर रूप दिया है। लेकिन सामान्य लोगों को कैसे पता चलेगा कि वह मूर्ति ही भगवान है और भगवान के अंदर ऐसी शक्तियाँ होती हैं?

भगवान के उपस्थित होने के बारे में बताने के लिए मूर्तियाँ बनाई गई हैं। मूर्ति भगवान नहीं है।

बाद में आने वाले भगवान धरती पर अपने कार्य पूरा करके तुरंत अपने अपने रूप छोड़कर चले गए। लेकिन सामान्य लोग उस रूप को भगवान समझते हुए उस रूप के अनुसार मूर्ति बनाकर उस मूर्ति को भगवान समझ बैठे हैं, और उनकी

आराधना कर रहे हैं। लेकिन लोग जान नहीं पा रहे हैं कि मूर्तियाँ केवल मूर्तियाँ हैं, भगवान नहीं हैं।

उनके द्वारा छोड़ दिए गए रूप को, तात्कालिक रूप को, क्षति हो गए रूप को सच समझ बैठे हैं, लेकिन ऐसा नहीं है। उस रूप में उपस्थित शाश्वत शक्ति भगवान है, लेकिन रूप भगवान नहीं है। वह 'शक्ति' ही 'आत्मा' है यानी 'आत्मा' ही भगवान है।

जिसका रूप नहीं है यानी आत्मा छोड़कर चले जाने वाले भगवान का रूप बनाकर, उस रूप की मूर्ति को भगवान समझते हुए आराधना कर रहे हैं।

(2) क्या भगवान मूर्ति में नहीं हैं?

मूर्ति की आराधना करने वाले लोगों से "मूर्ति की पूजा करना भगवान की पूजा करने के समान कैसे हो सकता है? क्या भगवान मूर्ति हैं?" पूछने पर तुरंत जवाब मिलता है, "मूर्ति भगवान नहीं है, लेकिन भगवान मूर्ति में नहीं हैं क्या? इसलिए मूर्ति की आराधना भगवान की आराधना के समान है ना?" यहीं तक उनकी सोच खत्म हो जाती है।

ऐसा कहने वाले लोगों को इसके परे सोचना चाहिए। भगवान मूर्ति में हैं। आपकी बात सही है, लेकिन मूर्ति में उपस्थित होने वाला कैसे होता है? उनकी लंबाई, चौड़ाई, मोटाई कितनी है? किस प्रकार की है? मूर्ति के अंदर कैसा है? मूर्ति भरी है? या मूर्ति के किसी कोने में हैं?" इन सारे प्रश्नों के बारे में भी सोचना आवश्यक है।

मूर्ति में रहने वाले का रूप क्या है? क्या वह सात फीट के हैं? अगर ऐसा है तो मूर्तियाँ दो या तीन फीट की क्यों होती हैं? अगर वह मोटा है तो इतनी छोटी मूर्तियों में कैसे फिट हो रहा है?" इन सब बातों को सोचना है।

क्या हम मूर्ति को देख रहे हैं या मूर्ति में रहने वाले को देख रहे हैं? मूर्ति का दर्शन करके हम भगवान के दर्शन करने का दावा कर रहे हैं? असलियत में हमने भगवान का दर्शन किया है या मूर्ति का दर्शन किया है? मूर्ति में रहने वाले का दर्शन किया है या मूर्ति का दर्शन किया है? मूर्ति में उपस्थित होने वाला हमें दिखाई दिया है? मूर्ति में रहने वाले को हमने कैसे देखा है? हमने मूर्ति का दर्शन किया है ना? लेकिन अंदर उपस्थित होने वाले का नहीं ना? लेकिन फिर भी हम भागवत दर्शन करने का दावा कर रहे हैं। इसका अर्थ हम सबसे झूठ कह रहे हैं ना?

मूर्तियों पर ध्यान देने वालों को भगवान अलग अलग दिखाई देते हैं। लेकिन मूर्ति के अंदर उपस्थित को देखने वाले के लिए सारे भगवान एक हैं। भगवान

को अलग अलग रूप में देख रहे हैं, लेकिन अंदर उपस्थित एक भगवान को नहीं देख पा रहे हैं।

फिर हम किस की आराधना कर रहे हैं? दिखाई देने वाली मूर्ति की या अंदर उपस्थित भगवान की? सोचने पर पता लगेगा कि हम बाहर की मूर्ति की आराधना कर रहे हैं। क्या बाहर उपस्थिति मूर्ति की आराधना करना अंदर उपस्थित भगवान की आराधना करने के समान है? हम बाहर की मूर्ति की आराधना और अंदर की भागवत आराधना को समान समझ रहे हैं लेकिन ऐसा नहीं है। हम सोच नहीं रहे हैं कि, "बाह्य दिखाई देने वाली मूर्ति की आराधना अंदर उपस्थित भगवान की आराधना करने के समान कैसे हो सकती है?"

आंतरिक उपस्थित सत्य भगवान का दर्शन करने वाले के समस्त पाप दूर हो जाते हैं, ना कि बाह्य मूर्ति के दर्शन करने वालों के। केवल बाह्य मूर्ति के दर्शन से पाप दूर कैसे होंगे? मुक्ति कैसे प्राप्त होगी? उन्हें मुक्ति नहीं मिलेगी। केवल संतुष्टि प्राप्त होगी।

मानव संतुष्टि को काफी समझता है जिसकी वजह से अंत तक दुखी रहता है। दुख के बीच तड़पता रहता है।

याद रखिए! मूर्ति के दर्शन से संतुष्टि प्राप्त होगी लेकिन मूर्ति के अंदर उपस्थित भगवान के दर्शन से मुक्ति प्राप्त होगी। सभी कष्ट और दुख से केवल तात्कालिक ही नहीं, बल्कि शाश्वत छुटकारा मिलेगा।

चलिए छोटा सा उदाहरण देखते हैं! किसी महान नेता का अभिनंदन करने के लिए बड़ी फूल माला ले जाकर, माला को उनके गले में डाले बिना, केवल घर की दहलीज पर टांगने से क्या माला नेता के गले में डालने के समान होगा? नेता को देखे बिना, उनसे मिले बिना, केवल माला को घर की दहलीज पर टांगने से कुछ फायदा होगा क्या? क्या ऐसा करना नेता का अभिनंदन करने के समान होगा? नहीं ना। ऐसा करने से हमें संतुष्टि मिल सकती है, लेकिन क्या नेता को कभी पता लगेगा कि आप उनसे मिलने आए थे या आप उनका अभिनंदन करने आए थे? इसलिए उनसे मिलने के लिए, उनका अभिनंदन करने के लिए अंदर जाना पड़ेगा। तभी हम नेता से मिल पाएंगे। अंदर जाए बिना, उन्हें देखे बिना, माला डाले बिना घर वापस लौटेंगे तो नेता को पता नहीं चलेगा कि हम उनसे मिलने आए थे। नेता हमें याद भी नहीं रखेगा। केवल हमें संतुष्टि प्राप्त होगी लेकिन इससे अधिक कुछ फायदा नहीं होगा।

इसी तरह मूर्ति के अंदर वाले की आराधना करने के लिए आपको अंदर जाना पड़ेगा। केवल बाहर से माला चढ़ाकर आने से कुछ फायदा नहीं होगा। इसी तरह मूर्ति की आराधना करके भगवान की आराधना कर रहे हैं समझना गलती है। अंदर मौजूद भगवान की आराधना करने के लिए अंदर जाना पड़ेगा। केवल बाहर से मूर्ति पूजा करने से हमें संतुष्टि मिल सकती है लेकिन मुक्ति नहीं।

इसलिए मूर्ति को नहीं, बल्कि अंदर मौजूद भगवान की आराधना करनी है। यहाँ कुछ दिमाग लगाकर सोचना है। चलिए मानते हैं कि भगवान अंदर हैं। अंदर उपस्थित भगवान को देखने के लिए मूर्ति के दो टुकड़े करने पड़ेंगे, क्या ऐसे करने से भगवान दिखाई देंगे? नहीं ना। मूर्ति का रूप है लेकिन अंदर मौजूद होने वाले का रूप नहीं है। फिर कैसे दिखाई देंगे? अंदर उपस्थित वाले का दर्शन कैसे करेंगे? हम मूर्ति के अंदर जा नहीं पाएंगे ना? फिर हम दर्शन कैसे करें? मूर्ति के अंदर उपस्थित वाले का दर्शन करना संभव है? हाँ संभव है!

थोड़ा दिमाग लगाकर सोचिए! जानिए कि निराकार, अनंत शक्ति स्वरूप, सर्वांतर्यामी होने वाले भगवान केवल मूर्ति में ही नहीं, बल्कि सब जगह हैं। भगवान को केवल मूर्ति में उपस्थित होने वाला समझना बेवकूफी है। भगवान सभी के अंदर उपस्थित हैं, इसी तरह हमारे अंदर भी हैं। अंतर्यामी बनकर हमारे अंदर भी हैं।

इसलिए भगवान को सर्वांतर्यामी कहा गया है। अंतर्यामी का दर्शन करने के लिए हम मूर्ति के अंदर नहीं जा सकते हैं, लेकिन अपने अंदर जा सकते हैं। केवल यही एक मार्ग है। अंदर होने वाले भगवान का दर्शन करने के लिए हमें अंतर्मुखी होना चाहिए! यानी 'ध्यान' करना चाहिए! ध्यान करने से भगवान का दर्शन कर पाएंगे। इसलिए जानना है कि 'ध्यान' ही भागवत आराधना है। मूर्ति आराधना भागवत आराधना के समान नहीं है।

(३) क्या मूर्ति की पूजा करना भगवान की पूजा करने के समान है?

कुछ लोग कहते हैं कि मूर्ति को भगवान मानकर पूजा करना, भगवान की पूजा करने के सामान होता है। यानी यहाँ मूर्ति प्रधान नहीं है, मान्यता प्रधान है। लोग कहते हैं कि सब कुछ मान्यता पर आधारित होता है। अगर मान्यता प्रधान है तो हम दुख और कष्ट प्राप्त करने की इच्छा नहीं करते हैं ना? फिर भी कष्ट क्यों आ रहे हैं? इसी तरह हम हमेशा आनंद और सुख से रहने की इच्छा करते हैं, लेकिन क्या हम

ऐसा रह पा रहे हैं? हम मृत्यु और अकाल मृत्यु की इच्छा नहीं करते हैं ना? फिर भी ऐसा क्यों होता है?

इसी तरह, मिट्टी को सोना, पत्थर को हीरा और पानी को घी, रेत को चीनी के रूप में मान सकते हैं? ऐसे मानने से क्या वैसे बन जाएंगे? नहीं। इसलिए मान्यता सत्य नहीं है।

मूर्ति को भगवान मानकर पूजा करने से भगवान को स्वीकार करते हैं तो भगवान की हर मान्यता को स्वीकार करके अनुग्रहण करना चाहिए। लेकिन क्या ऐसा हो रहा है? नहीं। इसलिए मान्यता सत्य नहीं है। क्योंकि मान्यता में दो प्रकार होते हैं। सत्य मान्यता और असत्य मान्यता।

सत्य मान्यता का अर्थ है, जो जैसा है उसे वैसा मानना। अग्नि को अग्नि के रूप में, जल को जल के रूप में मानना सत्य मान्यता है। इसके विरुद्ध मानना असत्य मान्यता है।

इसलिए मूर्ति मूर्ति होती है लेकिन भगवान नहीं। मूर्ति को भगवान मानना असत्य मान्यता है। असत्य भाव से की गई आराधना व्यर्थ होती है। हमारे श्रम को कभी व्यर्थ नहीं होने देना है।

भगवान के विषय में सत्य मान्यता क्या है? आत्मा को भगवान मानना सत्य मान्यता है क्योंकि आत्मा भगवान होती है। जब आत्मा भगवान है तो आत्मा की आराधना करना भी भागवत आराधना होती है। यही ध्यान है। इसलिए इस पर सोचिए और ध्यान दीजिए।

"परिवर्तनीय मान्यता से अधिक अपरिवर्तनीय सत्य पर ध्यान देना है!"

दुनिया में सभी लोग मान्यता के अनुसार आराधना करते हैं। लेकिन कोई भी सत्य यानी भगवान को नहीं पहचान रहा है। सच्चे भगवान की आराधना नहीं कर रहा है।

सत्य को नजरअंदाज करने से मनुष्य को इतने सारे दुखों का सामना करना पड़ रहा है। सत्य की आराधना करने वाले योगी केवल तात्कालिक रूप से कठिनाइयों से बाहर ही नहीं निकल रहे हैं, बल्कि शाश्वत रूप से कठिनाइयों से दूर हो रहे हैं। यानी मुक्ति प्राप्त कर रहे हैं। इससे हम ग्रहण कर सकते हैं कि मान्यता से अधिक सत्य महान है।

भगवान अपरिवर्तनीय हैं। जमाना बदलने से, युग बदलने से भगवान नहीं बदलते हैं। भगवान शाश्वत हैं। इसलिए भगवान की तुलना सत्य से की जाती है। हम जान सकते हैं कि परिवर्तित होने वाला भगवान नहीं हो सकता है। जो भगवान नहीं है उसकी आराधना करना व्यर्थ होता है।

बहुत सारे लोग सच्चे भगवान की आराधना करने के बारे में नहीं जानते हैं और विकल्प मार्ग चुनते हैं। लोग अपनी मान्यता के अनुसार आराधना कर रहे हैं। हर धर्म में अपनी अपनी आराधना के प्रकार हैं। एक विशिष्ट धर्म में भी कई सारे आराधना के प्रकार हैं जो मान्यता पर आधारित हैं। सारे धर्मों की आराधना समान नहीं होती है, अलग-अलग होती है। क्योंकि मान्यता हमेशा बदलती रहती है। मान्यता स्थिर नहीं होती है। एक बार उपस्थित मान्यता अगली बार नहीं होती है। मान्यता बदलने पर आराधना का प्रकार भी बदलता है, व्यवहार भी बदलता है।

उदाहरण के लिए, किसी तस्वीर को भगवान मानने वाले, उसकी पूजा करके उसे मंदिर में रखते हैं। हर रोज उसकी पूजा करते हैं। लेकिन उसी भगवान की तस्वीर को विवाह के निमंत्रण पत्र पर छापा जाता है। निमंत्रण पत्र पर भगवान की

तस्वीर बहुत सुंदर होती है फिर भी लोग उसे भगवान नहीं मानते हैं। शादी खत्म होने के बाद निमंत्रण पत्र को कहीं कूड़े कचरे के डिब्बे में फेंक देते हैं। गौर करिए, तस्वीर एक है, लेकिन मंदिर वाली तस्वीर को इज्जत मिल रही है और निमंत्रण पत्र वाली तस्वीर की बेइज्जती हो रही है। मान्यता बदलने से व्यवहार बदलता है।

इसी तरह, मंदिर के अंदर की मूर्ति को भगवान माना जाता है। उसकी आराधना की जाती है। लेकिन मंदिर के बाहर की मूर्ति को केवल मूर्ति समझा जाता है। तिरुपति में उपस्थित मूर्ति को वेंकटेश्वर स्वामी माना जाता है। चाहे कितनी भी दूर हो, लोग तिरुपति तक जाते हैं, दर्शन करते हैं। लेकिन उनके गांव में उपस्थित वेंकटेश्वर स्वामी के छोटे मंदिर पर उतना ध्यान नहीं देते हैं। हालांकि, गांव वाला मंदिर करीब होता है और पहुंचने के लिए आसान भी होता है, फिर भी लोग गांव के मंदिर को नजरअंदाज करके तिरुपति तक जाते हैं। मान्यता बदलने से एक ही भगवान को लोग अलग-अलग नजरिए से देखते हैं। मान्यता बदलने से व्यवहार बदल जाता है। भगवान की बाकी मूर्तियों के विषय में भी यही होता है।

क्योंकि हर जगह मान्यता बदल रही है ना? एक रूप वाले भगवान की मूर्तियों में ही मान्यता कितनी बार बदल रही है?

भगवान अपरिवर्तनीय हैं। सत्य हैं। "परिवर्तित होने वाली मान्यता पर ध्यान ना देते हुए, अपरिवर्तनीय और सत्य होने वाले भगवान की आराधना करनी है।" सत्य भगवान आत्मा है। आत्मा की आराधना ध्यान है। ध्यान कीजिए। सत्य पर बने रहिए। सत्य जानिए। "मान्यता आराधना नहीं, बल्कि सत्यता आराधना करनी है" और जीवन को धन्य बनाना है।

"अपने अंदर त्रिकरण शुद्धि रखने वाले लोगों को ही अंतरात्मा का प्रबोध स्पष्ट पता चलता है।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“मान्यता को नहीं, बल्कि सत्यता को प्रमुखता देनी चाहिए!”

हर चीज को भगवान स्वरूप मानने के बाद हर चीज का आदर करना है, लेकिन आराधना नहीं।

पत्थर भगवान है, फूल भगवान है, पत्ता भगवान है, जल भगवान है। किस की पूजा किस से करेंगे? किसी की भी किसी से पूजा करना भगवान का अपमान करने जैसा होगा। एक भगवान की पूजा करने के लिए दूसरे भगवान का अपमान करना ठीक है क्या?

पत्थर की पूजा पुष्प और पत्तों से करना, पत्थर को जल से अभिषेक करना, भगवान का अपमान करने जैसा होगा। इसलिए भगवान की आराधना करते हुए, पत्थर से अधिक पेड़ ही महान भगवान है। इसलिए पुष्प और पत्तों से पत्थर की पूजा कैसे कर सकते हैं? भूतत्व से जल तत्व विशेष होता है। तो फिर हम पत्थर का अभिषेक जल से क्यों करते हैं?

जल को भगवान स्वरूप समझते हुए नदियों की पूजा करते हैं। फिर उस भगवान को यानी पत्थर को जल से अभिषेक क्यों देते हैं? पूछने पर लोग जवाब देते हैं कि सब भगवान स्वरूप हैं। अगर ऐसा है तो मानव केवल पत्थर की पूजा क्यों करते हैं। उसे ही भगवान रूपी क्यों मानते हैं? बाकी की चीजों में क्यों भगवान को नहीं देखते हैं?

मानव मूर्ति और तस्वीरों की पूजा करते समय ही भगवान के बारे में सोचते हैं। बाद में वह उन्हें महत्त्व नहीं देते हैं। लोग पत्थर को भगवान की तरह नहीं मानते, बल्कि उसे ही भगवान समझते हैं। बाकी की मूर्तियों को भगवान नहीं मानते।

श्री कृष्ण की मूर्ति को भगवान कहते हैं और जीसस की मूर्ति को नहीं। मंदिर के अंदर की मूर्ति को भगवान मानते हैं और मंदिर के बाहर की मूर्ति को नहीं। दीवार पर लगाई हुई भगवान की तस्वीर को भगवान मानते हैं और निमंत्रण पत्र पर छापी गई तस्वीर को नहीं।

इसका मतलब तुम्हारे मानने से भगवान उपस्थित होते हैं और तुम्हारे नहीं मानने से नहीं होते हैं क्या? चाहे तुम मानो या ना मानो भगवान भगवान ही होते हैं! तुम्हारी मान्यता से भगवान का क्या संबंध है? मानव मान्यता पर ध्यान दे रहा है लेकिन सत्य पर नहीं। मानव की मान्यता सत्य को बदल पाएगी क्या? चाहे मानव जो भी माने, लेकिन जो

सत्य होता है वह सत्य ही होता है ना? **"सत्य कभी परिवर्तित नहीं होता है। परिवर्तित होने वाला सत्य नहीं होता है।"** किसी एक व्यक्ति की मान्यता सत्य को बदल नहीं सकती है।

अपनी पत्नी को पत्नी ना मानने से क्या आपकी पत्नी आपकी पत्नी नहीं रहेगी? इसी तरह, किसी दूसरे की पत्नी को अपनी पत्नी मानने से क्या वह आपकी पत्नी बन जाएगी? तुम्हारी मान्यता जो भी हो, लेकिन तुम्हारी पत्नी तुम्हारी पत्नी है। दूसरे की पत्नी दूसरे की पत्नी ही है। यह सत्य तुम्हारी मान्यता बदल नहीं सकती है।

तुम गांव से आए हो। तुम्हारे घर में बिजली नहीं है। कमरे में धुंधला अंधेरा है। पड़ोसी की पत्नी आपके घर आई और आपके कमरे के बिस्तर पर बैठ गई। आपकी बीवी चाय लाने के लिए रसोई में है। उस धुंधले अंधेरे में आपने पड़ोसन को अपनी बीवी समझकर आलिंगन कर लिया। तब वह क्या करेगी? आपको एक धक्का देकर गालियाँ देगी! 'दिखाई नहीं दे रहा है क्या?' कहकर चिल्लाएगी! इतना ही नहीं, बल्कि अगली बार आपके घर भी नहीं आएगी।

इसी तरह, अगर आपकी बीवी की साड़ी आपकी कामवाली बाई पहनकर आए और कामवाली को आप आलिंगन करेंगे तो वह क्या करेगी? आपको ढेर सारी गालियाँ देकर आपके घर में काम करना बंद कर देगी।

क्या आपके मानने से कामवाली और पड़ोसन आपकी बीवी बन जाएंगे? पलटकर आपको आलिंगन करेंगे? ऐसा कभी नहीं होगा। चाहे आप जो भी मानो, सत्य कभी नहीं बदलेगा। पड़ोसी का घर अपना घर मानने से क्या वह आपका हो जाएगा? खुद को एम.एल.ए. या एम.पी. मानने से आप एम.पी. बन जाएंगे? खुद को हीरो मानने से क्या आप हीरो बन जाएंगे? खुद को संगीत विद्वान मानने से क्या आप सच में संगीत विद्वान बन जाएंगे? इसलिए जानना चाहिए कि 'हमारी मान्यता सत्य को बदल नहीं सकती है।' मान्यता हमारे व्यवहार को बदलती है। इसलिए हम उसके अनुसार व्यवहार करते हैं जिसके कारण हम दुख में डूब जाते हैं। मूर्ति को भगवान समझ बैठते हैं। अपनी मनपसंद मूर्ति को भगवान समझते हैं और बाकी सारी मूर्तियों का भगवान होने से इनकार करते हैं। ऐसे कार्य करने से दुख के अलावा कुछ नहीं मिलता है।

सत्य जानिए। सच्चे भगवान को जानिए। भगवान के तत्व को जानिए। उनकी शक्ति को ग्रहण कीजिए। उसके अनुसार आराधना करिए। 'आत्मा' ही भगवान है, इसलिए ध्यान द्वारा आत्मा की आराधना कीजिए। जीवन को धन्य बनाएं। मान्यता को नहीं, बल्कि सत्य को महत्त्व दीजिए।

“आराधना मान्यता पर आधारित है – सत्य पर नहीं!”

संसार में मान्यता के अनुसार आराधना चल रही है। सत्य के अनुसार नहीं। यानी सब लोग अपने अपने भाव के अनुसार आराधना कर रहे हैं।

क्योंकि कुछ धर्मों में निराकार भगवान को आकार वाला माना जाता है और उनकी पूजा की जाती है। और कुछ धर्मों में रूप बनाकर पूजा की जाती है। इसी तरह, कुछ धर्मों में भगवान को निराकार समझकर प्रार्थना करते हैं यानी नमाज पढ़ते हैं। यानी लोग अपनी मान्यता के अनुसार आराधना कर रहे हैं।

गौर करने पर पता लगेगा कि आराधना में मान्यता ही प्रधान है। उदाहरण के लिए, कुछ लोग कृष्ण को अपना भगवान मानते हुए उनकी आराधना करते हैं। इसी तरह, कुछ लोग शिव, वेंकटेश्वर स्वामी, अय्यप्पा, सत्य साईं बाबा, शिर्डी साईं बाबा, इस तरह सब लोग अपने अपने भाव के अनुसार भगवान की आराधना करते हैं। कुछ लोग जीसस क्राइस्ट को भगवान मानते हुए प्रार्थना करते हैं।

मान्यता ही प्रधान है कहने के लिए उदाहरण यह है कि एक पत्थर को दो समान टुकड़े बनाकर एक टुकड़े को कृष्ण और दूसरे टुकड़े को जीसस बनाने से कृष्ण भक्त कृष्ण की मूर्ति की पूजा करेंगे, उसी पत्थर से बनाई जीसस की मूर्ति की ईसाई प्रार्थना करेंगे। हालांकि दोनों मूर्तियों को समान पत्थर से बनाए जाने पर भी कृष्ण भक्त जीसस की मूर्ति को अपने घर में रखना पसंद नहीं करते हैं और जीसस के भक्त कृष्ण की मूर्ति को अपने घर में रखना पसंद नहीं करते हैं।

इसी तरह एक कागज पर कृष्ण की तस्वीर बनाकर पूजा करते हैं। दूसरी तरफ किसी कागज पर जीसस की तस्वीर बनाकर प्रार्थना करते हैं। यहाँ कागज एक ही है, लेकिन लोग अपने द्वारा माने गए भगवान के रूप की आराधना कर रहे हैं। यहाँ भी मान्यता ही प्रधान है।

तिरुमला के वेंकटेश्वर स्वामी की मूर्ति को असली वेंकटेश्वर स्वामी मानने से कई सारे भक्त वहाँ आते हैं। उसी वेंकटेश्वर स्वामी की मूर्ति को किसी छोटे मंदिर

में स्थापित करने से वहाँ कुछ लोग ही जाते हैं। इसी तरह, लोग छोटे मंदिर कभी नहीं जाते हैं, क्योंकि वह उसे नहीं मानते हैं। जिस मंदिर को विशेष रूप से लोग मानते हैं उसी मंदिर में लोग दर्शन करने के लिए जाते हैं।

लोग अपने घर या दुकान में अपने मनपसंद भगवान की तस्वीर लगाते हैं, उसकी पूजा करते हैं। वही भगवान की तस्वीर को निमंत्रण पत्र, अखबार या किसी पुस्तक में दिखने पर ध्यान नहीं देते हैं। ऊपर से उन्हें उपयोग करने के बाद कचरे के डिब्बे में फेंक देते हैं क्योंकि उन्हें भगवान नहीं माना जाता है। किसी भगवान का रूप पूजा प्राप्त कर रहा है और वही भगवान का रूप कचरे के डिब्बे में गंदगी में सड़ रहा है। इसके पीछे का कारण किसी तस्वीर को भगवान मानना और किसी तस्वीर को भगवान नहीं मानना है। यहाँ भी मान्यता प्रधान है।

गौर करने से पता चलेगा कि कुछ लोग बहुत चाव से भगवान की तस्वीर वाले नए कैलेंडर को दीवार पर लगाते हैं। हर रोज इसे देखते और नमस्कार करते हैं। लेकिन बाद में वर्ष और तारीख बदलने के बाद किसी कोने में फेंक देते हैं। तारीख खत्म होने तक भगवान समझते हैं और बाद में फेंक देते हैं, क्या तारीख खत्म होने तक ही भगवान की तस्वीर भगवान होती है? बाद में नहीं होती है? यह लोग क्या तारीख को भगवान समझ रहे हैं? इनकी मान्यता क्या है? जब तक कैलेंडर की तस्वीर को भगवान मानते हैं तब तक तस्वीर भगवान होती है और बाद में लोगों के लिए वह कैलेंडर सिर्फ एक पुराना उपयोग किया हुआ कैलेंडर रह जाता है।

इसी तरह, बहुत सारे मंदिर पुराने हो गए हैं। पुराने हो गए कई हजारों लाखों मंदिरों पर कोई श्रद्धा नहीं दे रहा है। उनकी ओर कोई देख भी नहीं रहा है। जब लोग किसी मंदिर को भगवान समझते हैं तो उस मंदिर की मरम्मत करते हैं। बाद में सब लोग फिर से उस मंदिर में पूजा करते हैं। हर रोज मंदिर का दर्शन करते हैं। जब मान्यता नहीं होती है तो लोग टूटे-फूटे मंदिरों पर ध्यान देना छोड़ देते हैं। यहाँ भी पता चल रहा है कि आराधना मान्यता पर आधारित है ना?

इसी तरह जब कोई सूअर मंदिर के गोल प्रदक्षिणा करता है तो उसे वराह अवतार समझकर उसकी पूजा करते हैं। बाकी के सूअरों को जानवर समझकर गुरुर से मारकर खा जाते हैं। इसी तरह हर जानवर के विषय में होता है।

इसी तरह गृह प्रवेश के समय, दान के समय गाय को भगवान समझकर पूजा करते हैं। बाकी समय गाय को मारते पीटते हैं। उस पर ध्यान नहीं देते हैं। यानी आपको समझ आ रहा है ना आराधना मान्यता पर आधारित है?

सर्प की मूर्ति को नाग देवता मानकर पूजा करते हैं। लेकिन सांप दिखाई देने पर उसे मार देते हैं। इसी सांप को नाग देवता मानने से क्या आप उसे मार पाएंगे? मछली को खाते हैं। मंदिर में मछली की मूर्ति को मत्स्य अवतार समझकर पूजा करते हैं। पत्थर की मूर्ति को नंदीश्वर मानकर पूजा करते हैं। जिंदा बैल को मार मारकर उसकी हिंसा करते हैं। यानी मानव जिंदा प्राणी को भगवान नहीं समझते हैं। केवल उनकी पत्थर की मूर्तियों को भगवान मानते हैं। अपनी मान्यता के अनुसार व्यवहार करते हैं।

उसी प्रकार मंदिर की मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा करते हैं। यानी मूर्ति के अंदर प्राण डालकर उसकी पूजा करते हैं। यहाँ प्राण का मतलब भगवान मानते हैं। यानी इनका उद्देश्य प्राण भगवान है ना! लेकिन प्राण होने वाले जीव जंतु और मानव की चिंता क्यों कर रहे हैं? मानव से द्वेष क्यों कर रहे हैं? यानी यहाँ प्राण होने वाली चीजों को भगवान नहीं मानना कारण है। इसलिए लोग इस विषय को मन में रखकर व्यवहार कर रहे हैं। यानी सभी लोग मान्यता के अनुसार आराधना कर रहे हैं ना?

लोग मानते हैं, "पूजा में समर्पित की गई सभी चीजों को भगवान स्वीकार करते हैं।" लेकिन मनुष्य को पता नहीं है कि क्या सच में भगवान स्वीकार करेंगे या नहीं? लेकिन अपनी मान्यता के अनुसार केवल समर्पित करते रहते हैं। सोचते नहीं हैं कि भगवान को क्या पसंद है और क्या नहीं? हर दिन फूल, पत्र, दीप और प्रसाद समर्पित करके मानते हैं कि भगवान उन सबको स्वीकार कर लेंगे।

इतना ही नहीं, भगवान को यह दिन पसंद है, यह दिन नहीं पसंद है, ऐसा समझते हैं। विशेष दिन के लिए विशेष उपवास और दर्शन भी करते हैं। विशेष खाद्य

पदार्थ को प्रसाद के रूप में चढ़ाते हैं। क्योंकि लोग मानते हैं कि ऐसे करने से भगवान संतुष्ट और खुश हो जाएंगे। लेकिन मानव नहीं सोचते हैं कि क्या भगवान को भूख और प्यास लगती है? क्या भगवान के लिए आहार आवश्यक है?

इसी तरह, भगवान निद्रा से विश्रांति लेते हैं, कल्पना करके लोग सुबह सुप्रभात गाते हैं। लेकिन लोग नहीं सोचते हैं कि "क्या सच में भगवान को निद्रा की जरूरत है? क्या भगवान निद्रा लेते हैं? अगर भगवान विश्राम करेंगे तो दुनिया का क्या होगा?" यह व्यवहार लोग अपनी मान्यता के आधार पर करते हैं।

भगवान को स्नान कराना आवश्यक है समझकर भगवान की मूर्ति का अभिषेक करते हैं। भगवान की मूर्ति की शुद्धि करते हैं। लेकिन क्या परम पवित्र भगवान को शुद्धि की जरूरत है? स्नान की जरूरत है? क्या भगवान अपवित्र हो सकते हैं? कभी नहीं सोचते।

इसी प्रकार भगवान से मन्नत मांगते हैं। भगवान के आगे चढ़ावा चढ़ाते हैं। लेकिन लोग नहीं सोचते हैं कि "क्या भगवान इतने अल्प उपहार स्वीकार करेंगे? यह सारी सृष्टि भगवान की है, तो धरती पर मौजूद सारी संपदा भगवान की है ना? फिर भगवान ऐसी अल्प चीजों की आशा क्यों करेंगे?"

दुनिया में हर जगह भगवान के विषय में हर एक धर्म की अपनी-अपनी मान्यताएं हैं। अलग-अलग प्रकार की मान्यताएं हैं। सब लोग अपनी मान्यता के अनुसार आराधना करते हैं। यानी हमें स्पष्ट रूप से पता लगता है कि मान्यता के अनुसार आराधना होती है।

इतना ही नहीं, विग्रह आराधना करने वाले लोग भी अपनी मान्यता के अनुसार आराधना करते हैं। कुछ लोग मूर्ति को भगवान मानकर आराधना करते हैं। कुछ लोग मूर्ति के अंदर भगवान के उपस्थित होने पर विश्वास रखकर आराधना करते हैं। कुछ लोग मूर्ति की आराधना भगवान की आराधना मानकर करते हैं। यह सब मान्यता पर आधारित है ना?

लेकिन याद रखना चाहिए कि चाहे मानव माने या ना माने! भगवान भगवान हैं। वह सत्यवान, शाश्वत और अपरिवर्तनीय हैं। वह मानव की मान्यता पर

आधारित नहीं हैं। मानव के ना मानने से भी भगवान भगवान ही होते हैं। भगवान पर समस्त जीव आधारित हैं। समस्त सृष्टि आधारित है। समस्त मानव आधारित हैं। इन सब लोगों की मान्यताएं बदल सकती हैं लेकिन भगवान कभी नहीं बदलते हैं। बदलने वाला भगवान नहीं होता है। मानव को भगवान पर आधारित होकर उनकी आराधना करनी चाहिए, अपनी मान्यता पर आधारित होकर नहीं। क्योंकि हर किसी की मान्यता समान नहीं होती है। "भावनाएं (मान्यताएं) अनेक हैं लेकिन भगवान एक हैं।"

इसलिए मान्यता को छोड़कर सत्य होने वाले भगवान की आराधना करनी है। सच्चा और अपरिवर्तनीय भगवान कौन है? वही आत्मा है। आत्मा ही सत्य भगवान है। आत्मा की आराधना ही सच्ची भागवत आराधना है। आत्मा की आराधना करने का मतलब ध्यान करना है। इसलिए ध्यान करने वाले भागवत आराधना और भक्त कहलाए जाते हैं।

"स्वयं का कल्याण करना महान होता है,
लोक कल्याण करना और भी महान होता है।"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“क्या भगवान केवल मान्यता पर आधारित होते हैं?”

मूर्ति में भगवान के उपस्थित होने का मतलब “केवल मूर्ति में रहने वाले ही भगवान हैं” कहने जैसा है ना? क्या अंदर उपस्थित भगवान दिखाई देते हैं? नहीं ना? इसका मतलब दिखाई देने वाली मूर्ति भगवान नहीं है ना?

मूर्ति में गोचर और अगोचर, दो प्रकार की चीजें हैं। पत्थर से बनाई गई मूर्ति गोचर है और अगोचर भगवान है।

मानव गोचर को अधिक प्रमुख मान रहे हैं। अगोचर भगवान को महत्त्व नहीं दे रहे हैं। अगोचर भगवान को महत्त्व देने वाले लोगों को पता है कि भगवान हर चीज में उपस्थित हैं। इतना ही नहीं, स्वयं में भी उपस्थित हैं।

लेकिन केवल गोचर मूर्ति को महत्त्व देने वाले इस बात को ग्रहण नहीं कर पाएंगे। वह मूर्तियों में भगवान देखते हैं। अपने पसंदीदा रूप में भगवान की कल्पना करते हैं। या भगवान के रूप को भगवान मानते हैं। इतना ही नहीं, उनको पसंद ना होने वाले रूप को भगवान नहीं मानते हैं, उल्टा अपनी बात को साबित करने के लिए बहस भी करते हैं। बहुत प्रकार से बहस करते हैं। सोचते और समझते नहीं हैं। भगवान के विषय में मानव ऐसी परिस्थिति में हैं!

मानव समझ रहा है कि उसके मानने से भगवान भगवान होते हैं, उसके ना मानने से भगवान नहीं होते हैं, लेकिन ऐसा नहीं है। क्या मानव जो जैसा समझेगा वह वैसा हो जाएगा? क्या बिल्ली को शेर मानने से बिल्ली शेर बन जाएगी? गधे को घोड़ा मानने से क्या गधा घोड़ा बन जाएगा? रस्सी को सांप मानने से क्या रस्सी सांप बन जाएगी? झोपड़ी की बड़े बंगले के रूप में कल्पना करने से क्या वह बंगला बन जाएगा? नहीं ना?

इसलिए हम जितना भी मान लें, लेकिन मूर्ति मूर्ति होती है भगवान नहीं। इसलिए असली भगवान को पहचानकर उनकी आराधना करनी है।

कुछ लोग कहते हैं कि कृष्ण ने “यद् भावं तद् भवति” कहा है इसलिए हम मूर्ति को भगवान मानकर आराधना कर रहे हैं। सारी दुनिया ऐसे ही मान रही है ना?

लेकिन "यद् भावं तद् भवति" का मतलब "आप जैसा सोचेंगे वैसा होगा" है। इसका अर्थ यह नहीं है कि आप जो भी मानो वह सब सच हो जाएगा।

आप एम.एल.ए. से मिलने गए। वहाँ पर दस लोग बैठे हुए हैं। इसमें आपको पता नहीं है कि एम.एल.ए. कौन है। आपने उन लोगों में से किसी एक को एम.एल.ए. मान लिया। तुरंत उस व्यक्ति को आप नमस्कार करेंगे, माला पहनाएंगे। लेकिन क्या आपके मानने से वह व्यक्ति सचमुच एम.एल.ए. बन जाएगा? नहीं। आप कितनी भी मजबूती से मान लें, फिर भी वह व्यक्ति सामान्य इंसान रहेगा। आपने केवल उसे एम.एल.ए. माना है, इससे वह एम.एल.ए. नहीं बन जाएगा। चाहे आप उसे नमस्कार करें, माला चढ़ाएं, उसके पैर पड़ जाएं, वह सामान्य व्यक्ति ही रहेगा। यहाँ आपकी मान्यता पर आपका व्यवहार आधारित है, लेकिन आप जिसे एम.एल.ए. मानेंगे वह एम.एल.ए. नहीं बन जाएगा। आपके मानने से सच नहीं बदलेगा।

बाकी लोगों के बीच में सचमुच का एम.एल.ए. बैठा हुआ है। सच के एम.एल.ए. को आप एम.एल.ए. नहीं मान रहे हैं। क्या आपके नहीं मानने से असली एम.एल.ए. एक एम.एल.ए. नहीं रहेगा? चाहे तुम मानो या ना मानो, असली एम.एल.ए.असली ही है। यही वास्तव है। आपकी मान्यता पर सत्य नहीं बदलेगा। केवल आपका व्यवहार बदलेगा।

एम.एल.ए. ना होने पर भी आपके द्वारा एम.एल.ए. मानने से आपने उसे नमस्कार किया, माला चढ़ाई। सच के एम.एल.ए.को आपने एम.एल.ए. नहीं माना है इसलिए आपने उन्हें माला नहीं चढ़ाई और नमस्कार नहीं किया। इनको छोड़कर दूसरे को नमस्कार करेंगे तो क्या एम.एल.ए. आप पर ध्यान देंगे? आपका काम करेंगे? ऊपर से उनके मौजूद होने पर भी उन्हें ना पहचानना उनकी बेइज्जती करना होगा ना? अपनी बेइज्जती करने वालों का काम एम.एल.ए. कैसे करेंगे?

इसका अर्थ यह है कि असत्य चीजों को सत्य मानकर चलेंगे तो हमें क्षति होगा। अगर आपको असली एम.एल.ए. के बारे में पता नहीं है तो आपको जानना चाहिए। इसके अलावा जिसे चाहे उसे एम.एल.ए. नहीं मानना चाहिए।

अंधभक्त बनकर केवल अपनी मान्यता का आंख मूंदकर पालन करोगे तो आपको ही क्षति पहुंचेगी।

इसी प्रकार, भगवान कौन हैं? कहाँ हैं? जानकर उनकी आराधना करनी चाहिए। मनमर्जी का व्यवहार करते हुए, आपकी पसंदीदा मूर्ति को भगवान मानकर चलोगे तो आपकी सारी आराधना व्यर्थ हो जाएगी।

सच्चे भगवान को अपने अत्यंत करीब रखकर भी उन्हें पहचाने बिना, उनकी आराधना किए बिना, उनका तिरस्कार करके, "मैं मजबूत मान्यता से कर रहा हूँ। भगवान मूर्ति में नहीं हैं क्या? फिर सब लोग मूर्ति की आराधना क्यों कर रहे हैं?" ऐसे बेतुके सवाल करते हुए आराधना करने से आपकी सारी आराधना व्यर्थ हो जाएगी। ऊपर से भगवान को नहीं पहचानना, उनका तिरस्कार करना, भगवान का अपमान करने के समान होगा, ना कि भगवान की आराधना! ऐसे लोगों को भगवान का अनुग्रह कैसे प्राप्त होगा? "भगवान के बारे में मुझे पता नहीं" कहना काफी होगा क्या? अगर भगवान के बारे में आपको पता नहीं तो जानिए! जानकर सच्चे भगवान की आराधना कीजिए।

सच्चा भगवान कौन है? उनकी आराधना कैसे करनी है? सच्चा भगवान सबके अंदर उपस्थित आत्मा है। आत्म आराधना असली आराधना है। आत्मा की आराधना करने के लिए ध्यान करना है। इसलिए जानिए कि ध्यान असली भागवत आराधना है। इसलिए सारे योगी ध्यान करते हैं।

"हमेशा प्रकृति से आत्मीयता रखनी है।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

"मान्यता या सत्य?"

दुनिया में भगवान की आराधना मान्यता के आधार पर हो रही है। सभी लोग मान्यता को महत्त्व दे रहे हैं, सत्य को नहीं। लेकिन "मान्यता से अधिक महान सत्य है।" मान्यता पर आधारित होने वालों से अधिक सत्य पर आधारित होने वाले महान हैं।

सामान्य और पंडित लोग मान्यता को महत्त्व दे रहे हैं। योगी 'सत्य' को महत्त्व दे रहे हैं। सत्य को पकड़े रखने से वह धन्य हो गए हैं और भगवान बन गए हैं।

मान्यता यानी 'मन' है। सत्य यानी 'आत्मा' है। थोड़ा सोचने पर पता चलेगा मन महान है या आत्मा? हम कहेंगे कि आत्मा महान है। क्योंकि हमारा मन शरीर के साथ आता है। बाद में शरीर के साथ अदृश्य हो जाता है। लेकिन आत्मा का जीवन मरण नहीं है। मन तात्कालिक है तो आत्मा शाश्वत है। इसलिए इस सृष्टि में केवल आत्मा ही सत्य है।

समय अनुसार मन की मान्यता बदलती रहती है। एक दूसरे की मान्यता आपस में संबंधित नहीं होती है। संसार में लोग मान्यता पर आधारित होते हैं इसलिए हर किसी के पास भगवान के बारे में अलग-अलग मान्यता होती है। एक धर्म वाले मूर्ति को भगवान मानते हैं! दूसरे धर्म वाले तस्वीर को भगवान मानते हैं। दूसरे धर्म वाले भगवान को निराकार मानते हैं। कोई भगवान को मंदिर में उपस्थित मानता है। कोई भगवान को चर्च में उपस्थित मानता है। कोई भगवान को मस्जिद में उपस्थित मानता है।

इस तरह लोगों, धर्मों, प्रांतों, देशों में मान्यता अलग-अलग होती है। जमाना बदलने पर, सृष्टि में परिवर्तन होने पर भी नहीं बदलने वाली केवल 'सत्य आत्मा' है। सत्य क्या है? नित्य ही सत्य है। नित्य क्या है? शाश्वत होने वाला नित्य है! शाश्वत क्या है? युग बदलने पर भी नहीं बदलने वाला शाश्वत है। वही 'आत्मा' है। इसलिए 'अशाश्वत मन' की मान्यता पर नहीं, बल्कि 'सत्य आत्मा' की आराधना करनी है। आत्मा का आश्रय लेना है। आत्मा पर ध्यान देना है। वही धन्य बनेगा।

इसी प्रकार, कोई मूर्ति को भगवान समझता है तो दूसरा तुलसी के पौधे को भगवान समझता है। कोई नदी को भगवान समझता है तो दूसरा अग्नि को भगवान समझता है। कोई सूर्य को भगवान समझता है तो दूसरा गाय, सर्प, बैल जैसे जानवरों को भगवान समझता है। कोई वायु को भगवान समझता है तो दूसरा धरती माता को भगवान समझता है। इस प्रकार हर कोई अपनी-अपनी मान्यता के आधार पर आराधना करता है। लेकिन कोई भी सत्य आत्मा यानी भगवान को पहचान नहीं रहा है।

इसी संदर्भ में पत्री जी ने एक छोटा सा कान्सेप्ट बताया है। किसी ने सत्य के बारे में कहने के लिए पत्री जी से पूछा था। तो उन्होंने इस प्रकार बताया। सत्य चार प्रकार के हैं :- 1) क्षणिक सत्य, 2) जीवन काल सत्य, 3) युग काल सत्य, 4) शाश्वत सत्य

क्षणिक सत्य वह है जो एक समय में उपस्थित होता है, लेकिन कुछ समय बाद नहीं होता है।

उदाहरण - एक प्लेट में मिठाई रखकर खा रहे हैं। वर्तमान के लिए मिठाई मौजूद है, यह सत्य है, लेकिन क्या हमारे खाने के बाद भी मिठाई होगी? नहीं। पहले थी, लेकिन अब नहीं है। इसी को क्षणिक सत्य कहते हैं। टीवी में चित्र दिखाई दे रहा है। वही चित्र थोड़ी देर बाद नहीं होगा। चित्र बदल जाएगा। ऐसे सारी चीजें क्षणिक सत्य होती हैं। यह एक प्रकार से भोग भाग्य क्षणिक सत्य होती हैं।

जीवन का सत्य भी एक और सत्य है। जन्म लिया हुआ मानव वर्तमान के लिए उपस्थित है। लेकिन उसका जीवन काल समाप्त होने के बाद भी क्या वह उपस्थित रहेगा? नहीं। इसी तरह सृष्टि की सभी जातियाँ हैं। वृक्ष जाति, पक्षी जाति, जंतु जाति, सारी जातियाँ अपने जीवन काल खत्म होने के बाद मौजूद नहीं होती हैं। अदृश्य हो जाती हैं। क्या अब मौजूद हैं? हाँ मौजूद हैं। लेकिन उनका जीवनकाल खत्म होने के बाद मौजूद नहीं होंगे। यह सारे जीवन काल सत्य हैं।

इसी प्रकार, युग काल सत्य भी है। हमें दिखाई देने वाले सूर्य और चंद्र, ग्रह, अदृश्य ग्रह, धरती, जल, अग्नि, वायु, ऐसे सारे पंचभूत वर्तमान में मौजूद हैं। लेकिन युगांत में सारे समाप्त हो जाएंगे। इन्हें युग काल सत्य कहते हैं।

इसलिए "भगवान आंख बंद करेंगे तो सृष्टि अंत हो जाएगी। भगवान आँख खोलेंगे तो सृष्टि प्रारंभ होगी" ऐसा कहते हैं।

इसी प्रकार, 'शाश्वत सत्य' भी है। वही 'आत्मा' यानी 'भगवान' है। आत्मा यानी भगवान का कोई अंत, प्रारंभ, मृत्यु या जन्म नहीं है। इसलिए भगवान की तुलना सत्य से की जाती है क्योंकि भगवान शाश्वत होते हैं।

शंकराचार्य जी ने "ब्रह्म सत्यम जगन्मिथ्या" कहा है। लेकिन मानव जगत को भगवान मान रहे हैं। शाश्वत और सत्य आत्मा को भगवान नहीं मान रहे हैं। सत्य आत्मा का वितरण करने से आपको ही क्षति होगी। इसलिए जानना है कि मान्यता महान नहीं है। सत्य महान है। ऐसे सत्यवादी आत्मा पर ध्यान रखने के लिए सबको "श्वास पर ध्यान" रखकर ध्यान करना है। इसके अलावा दूसरा रास्ता नहीं है। एक बार और याद कीजिए, "मान्यता नहीं, बल्कि सत्य महान है"।

"आगे वालों की नहीं, बल्कि 'मेरा' और 'मैं' नामक अहंकार की हत्या करनी है।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“आत्म साक्षात्कार मार्ग के उपाय!”

कुत्ते को भी अपने यजमान के प्रति कृतज्ञता भाव होता है। कृतज्ञता व्यक्त नहीं करने वाला कुत्ते से बदतर है। आत्मा द्वारा अनेक लाभ प्राप्त करते हुए, आत्मा के बारे में ज्ञान प्राप्त नहीं करना, आत्मा पर ध्यान नहीं देना, आत्मा को भूल जाना, आत्मा के प्रति कृतज्ञता नहीं व्यक्त करने के समान है। ऐसा व्यक्ति जानवर से बदतर है।

साधारण रूप से मानव दान करके तृप्त होते हैं। व्रत रखकर पुण्य प्राप्त होता है, ऐसा समझते हैं। यज्ञ करके, सारे देवताओं का अनुग्रह प्राप्त होने जैसा मानते हैं। जाप करके स्वर्ग प्राप्त होने जैसा महसूस करते हैं। मंदिर और तीर्थ दर्शन करके स्वर्ग पहुंचने का सोचते हैं। कुछ भी कर लीजिए, जब तक आत्मज्ञान प्राप्त नहीं होता तब तक यह सब व्यर्थ है। इन सबसे दुखनिवारण ही नहीं, बल्कि ब्रह्मत्व भी मिलेगा।

आत्म ज्ञान और आत्म साक्षात्कार प्राप्त करना इतनी आसान बात नहीं है। इसके लिए विशेष ध्यान साधना करनी है। योगियों की पुस्तकें पढ़नी हैं। आत्मा के बारे में भजन कराने वालों के साथ रहना है। इनके साथ-साथ निम्न दिए गए उपाय का पालन करना है :-

1) अहिंसा :-सृष्टि में किसी भी प्राणी की शारीरिक या मानसिक रूप से हिंसा नहीं करनी है। किसी जानवर की हत्या नहीं करनी है। उनका मांस नहीं खाना है। बेचारे जानवरों पर दया करनी है।

2) सत्यवर्तन :- सारे जीव यानी मानवों के साथ-साथ जानवर, वृक्ष आदि के विषय में भी समस्थिति के साथ रहना है। केवल स्वयं को ही नहीं, बल्कि बाकी सारे जीवों को भी जीने का हक है, विश्वास करते हुए उनका आदर करना है।

3) स्नेह :- इस सत्य को जानना है कि “सृष्टि सब एक है। जब मैं हूँ, मैं ‘महात्मा सर्व भूतात्मा हूँ”, वृक्ष और सारे जीव जंतुओं से स्नेह करना है।

4) धर्माचरण :- अंतरात्मा द्वारा सूचित किए गए धर्म, सलाह और चेतावनी का पालन करना धर्माचरण है।

5) दान :- हमें दिए गए समय, वाक्, शक्ति, संपत्ति को प्रतिफल की आशा किए बिना दुनिया के लिए खर्च करना दान होता है।

6) निस्वार्थ सेवा, त्यागशीलता :- यह दोनों आत्मा तक पहुंचने के मार्ग हैं।

7) सूचना :- स्वयं के ज्ञान, अपने विचार, बात, कार्य और व्यवहार पर हमेशा ध्यान देना है।

8) जानना चाहिए कि कार्य करने को महत्त्व देना चाहिए, उसके परिणाम को नहीं।

9) साधना :- जानना है कि 'कष्टे फली' है यानी मेहनत से फल मिलता है। मेहनत से ध्यान साधना करनी चाहिए।

10) स्वाध्याय :- अनुभव ज्ञान प्राप्त करने वाले योगियों की पुस्तकों का पठन करना है।

11) विवेक :- आपके बारे में कोई बुरी बात करे, आपको गाली दे, आपकी बेइज्जती करे, ऐसे समय विवेक नहीं खोना है।

12) सज्जन सांगत्य :- सत्य जानने वाले यानी आत्मज्ञानी यानी आत्मा के बारे में बताने वालों के साथ रहना है।

13) आनंद से रहना है :- हर परिस्थिति में खुश रहना है यानी सुख-दुख, हार-जीत, हर समय खुश रहना है। चाहे आपके दांत झड़ जाएं, आपके बाल सफेद हो जाएं, आपकी त्वचा पर झुर्रियां पड़ जाएं, हर समय आपको खुश रहना है।

14) स्वतंत्र होना है :- स्वेच्छा और स्वतंत्रता से जीने की आदत डालनी है। परतंत्र नहीं होना है। यानी दूसरों के लिए नहीं जीना है। दूसरों के परीक्षित के बारे में नहीं सोचना है। अपनी अंतरात्मा का अनुसरण करना है।

15) अंतर श्रवण :- ध्यान साधना करते समय अकाल्पनिक सूचनाएं आपके अंदर से आती रहती हैं। दर्शन, स्वप्न, बात, अति सूक्ष्म प्रेरणा, प्रज्ञा का अनुभव होने पर किसी किताब में लिखकर रखना है। बाद में उनका मनन करना है। उनका आचरण करना है।

16) अंतर सहाय :- ध्यान में बहुत मदद मिलती है। इसलिए ध्यान अधिक से अधिक करना है। अंतर सहाय से महान कार्य और निस्वार्थ सेवा करते रहना है।

17) पवित्रता :- जानना है कि "पवित्र जीवन परमात्मा सन्निधि यानी आत्मा तक पहुंचने का मार्ग है।" पवित्र रूप से जीवन बिताना है।

18) मैं, मेरा :- यहाँ 'मैं' का कुछ फायदा नहीं है। 'मेरा' का भी कुछ फायदा नहीं है। आपको जानना है कि कोई भी आपका अपना नहीं है। जानना है कि आपको प्रदान की गई हर एक चीज का सही उपयोग करते हुए, उन्हें दुनिया की मदद करने के लिए प्रदान किया जा रहा है। "मैं" वाला अहंकार और "मेरा" वाली ममता को छोड़ देना है।

ऊपर दिए गए विषय 'आत्म साक्षात्कार' यानी "भागवत साक्षात्कार" के उपाय हैं। यह सारी चीजें आत्मा से संबंधित ज्ञान प्रदान करती हैं। आत्मा का साक्षात्कार करने में मदद करती हैं। इन सभी का पालन मानव को करना है क्योंकि आत्मा द्वारा ही मानव धरती पर जिंदा है। आत्मा द्वारा ही मानव सारे भोग भाग्य का आनंद ले रहा है। आत्मा को बोलने पर ही इतने सारे दुखों का सामना कर रहा है। इसलिए ऊपर दिए गए विषय पर ध्यान देते हुए उनका पालन करके "आत्मा की पहचान" करनी है। आत्मा के प्रति कृतज्ञता दिखानी है। यानी अधिक से अधिक ध्यान करना है। सबसे अधिक 'आत्मा' पर ध्यान देना है।

"त्याग द्वारा ही अमृत तत्व सिद्ध होता है।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

"भागवत दर्शन!"

भागवत दर्शन प्राप्त करने वाला अनंत, अवर्णित आनंद अनुभूति प्राप्त करता है। उसी समय समस्त संदेह और संशय निवृत्त होते हैं। सारे डर दूर होते हैं। (आहार का डर, बीमारी का डर, समस्या का डर, मृत्यु का डर।) सारी इच्छाएं दूर हो जाती हैं। माया संबंध से बाहर निकलते हैं। जान जाते हैं कि समस्त एक है। उसके समस्त पाप दूर हो जाते हैं। अनंत और अवर्णित ब्रह्मानंद प्राप्त करते हैं। भगवान का दर्शन करने वालों की स्थिति ऐसी होगी। भागवत दर्शन प्राप्त नहीं करने वालों की स्थिति ऐसी नहीं होगी।

मूर्ति को भगवान मानने वाले क्या विग्रह दर्शन से ऐसे परिणाम प्राप्त कर रहे हैं? यह सोचने पर जवाब नहीं मिलेगा। ऐसे परिणाम को प्राप्त ना करने का मतलब है कि आपको विग्रह दर्शन द्वारा भागवत दर्शन नहीं प्राप्त हुआ है, है ना? यानी मूर्ति भगवान नहीं है ना? इसलिए ऐसे लोगों को सच्चे भगवान को ढूंढने की जरूरत है।

इसी प्रकार, कुछ लोग भागवत स्थिति प्राप्त करने वालों का दर्शन करके, भागवत दर्शन प्राप्त करने जैसा मानते हैं। ऐसे सत्य साईं बाबा, सुभाष पत्री जी जैसे लोगों का दर्शन करने की कोशिश करते हैं। लेकिन एक बार विश्लेषण करना है कि "क्या ऐसा करने से कोई परिणाम हासिल हुआ है या नहीं?" अगर ऊपर दिए गए परिणाम आपको हासिल नहीं हुए तो वह भागवत दर्शन नहीं है।

हमें समझ आता है कि दिखने वाली चीजों का दर्शन करने से भागवत दर्शन की अनुभूति नहीं मिलती है। क्योंकि भगवान अदृश्य हैं। भगवान कहीं बाहर नहीं हैं। एक बार देखकर वापस अदृश्य होने का रूप भगवान का नहीं है। सबके अंदर निराकार बनकर प्रकाशित हो रही आत्मा ही भगवान है। इसलिए आत्मा का दर्शन करने की कोशिश करनी है। यानी अंतर्मुखी बनना है। यानी ध्यान करना है। ध्यान करके आत्मा का दर्शन करना भागवत दर्शन के समान है। आत्मा का दर्शन करने वालों को ऊपर बताए गए सारे लाभ प्राप्त होंगे।

इसलिए विग्रह दर्शन को भागवत दर्शन के समान मानकर संतुष्ट नहीं होना है। विवेक से सोचना है। आत्म दर्शन के लिए कोशिश करनी है। ध्यान करना है।

“विश्व या विश्वनाथ?”

विश्व यानी ‘सृष्टि’ है। विश्वनाथ यानी सृष्टि का निर्माण करने वाले भगवान। विश्व को ‘प्रकृति’ कहते हैं। विश्वनाथ को ‘पुरुष’ कहते हैं।

भगवान की सृष्टि दिखाई देती है। लेकिन भगवान दिखाई नहीं देते हैं। इसलिए हमारी आंख को दिखाई देने वाली सारी ‘भागवत सृष्टि’ है लेकिन भगवान नहीं हैं। गौर करने पर पता लगेगा कि निर्माण किए गए सारे तात्कालिक हैं। सारे अदृश्य हो जाने वाले हैं यानी गायब हो जाने वाले हैं। इसलिए दृश्य सृष्टि को माया प्रपंच कहा जाता है। लेकिन किसी के भी द्वारा निर्मित ना किए गए भगवान शाश्वत हैं, अपरिवर्तनीय हैं, सच्चे हैं।

दृश्य सृष्टि को प्रपंच कहते हैं। उस मार्ग में रहने वालों को प्राप्त मार्ग वाले कहते हैं। माया की तरफ आकर्षित होने वाले कहते हैं। इसी प्रकार भागवत मार्ग में होने वालों को ‘आध्यात्मिक मार्ग’ वाले कहते हैं। माया से बाहर निकलने वाले कहते हैं।

वर्तमान में दृश्य रहकर बाद में अदृश्य होने वाले माया प्रपंच के प्रति आकर्षित होकर, व्यामोह बढ़ाने वालों को ममता वाले कहते हैं। इसके बजाय शाश्वत भगवान की तरफ आकर्षित होने वालों को ममता ना होने वाले कहते हैं।

सृष्टि में मौजूद आनंद और सृष्टि से प्राप्त होने वाला आनंद तात्कालिक है। मानव इस दुनिया के प्रति आकर्षित होकर इस दुनिया से तात्कालिक आनंद मांग रहे हैं। लेकिन शाश्वत आनंद प्राप्त करने के लिए भगवान कुछ नहीं मांग रहे हैं।

भगवान के नाम से किए जाने वाली पूजा, भजन, प्रार्थना, नमाज भी सृष्टि के हैं, लेकिन भगवान के लिए नहीं हैं। यानी उनकी भक्ति ‘दुनिया पर है लेकिन भगवान पर नहीं’ है।

सोचिए! सृष्टि महान है या सृष्टि का निर्माण करने वाला? यानी विश्व महान है या विश्वनाथ? कौन महान है? पूछने पर जवाब ‘भगवान’ मिलता है।

क्योंकि भगवान ऐसी कई सारी चीजों का निर्माण कर सकते हैं। इसलिए **"सृष्टि से अधिक उसे निर्माण करने वाला महान होता है।"**

सब लोग भगवान को महान समझते हैं लेकिन असलियत में सब लोग सृष्टि से प्यार करते हैं। मानव की कोशिश संसार में मौजूद चीजें प्राप्त करना है ना कि भगवान को प्राप्त करना।

संसार को प्राप्त करके, तात्कालिक आनंद प्राप्त करते हैं, जिसके साथ दुख भी प्राप्त करते हैं। इसलिए वहाँ माया प्रपंच की ओर आकर्षित हो रहे हैं! यानी माया प्रपंच में फंसकर दुखों का सामना कर रहे हैं। लेकिन भगवान को प्राप्त करने वाले दुख के बिना शाश्वत आनंद प्राप्त कर रहे हैं। इसलिए माया से बाहर निकलकर भगवान की ओर यात्रा करके शाश्वत आनंद प्राप्त करने वाले भाग्यवान होते हैं।

मानव की पांच ज्ञानेंद्रियाँ हैं। उन पांच इंद्रियों को संतुष्ट करने वाले सुख माया प्रपंच में मौजूद हैं। मानव इंद्रिय सुख के गुलाम बनकर, उनके लिए अपना सारा जीवन व्यर्थ कर रहे हैं, अगर इसमें से थोड़ा भी समय भगवान के लिए खर्च करेंगे तो उनके सारे दुख दूर हो जाएंगे। भगवान भी प्रसन्न हो जाएंगे।

भगवान के उपस्थित होने का दावा करते हैं। भगवान को महान मानते हैं। लेकिन भगवान के बारे में जानने की कोशिश नहीं करते हैं। हमेशा दुनिया की चीजों पर ध्यान देते हैं। दुनिया पर ध्यान छोड़कर, भगवान पर श्रद्धा रखनी है। यही मानव जीवन का लक्ष्य है। "विश्व नहीं विश्वनाथ महान है।" ऐसे महान विश्वनाथ को प्राप्त करने के लिए क्या करना है?

शक्तिशाली भगवान पर ध्यान रखने के लिए, भगवान को प्राप्त करने के लिए, मानव को शक्तिशाली बनना है। अपनी शक्ति को बढ़ाना है। केवल शक्तिशाली मानव भगवान की ओर आकर्षित होकर भगवान को प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन मानव द्वारा किए जाने वाले कार्य उन्हें शक्तिहीन बना रहे हैं। इसलिए मनुष्य माया से बाहर नहीं निकल पा रहा है।

'विश्व' की ओर आकर्षित होने वाले कौन हैं? संपत्ति, सुख, नाम, ऊँचे पद के पीछे भागने वाले। यानी 'कीर्ति, कांत, कनक' के प्रति आकर्षित होने वाले हैं। वह सभी

शक्तिहीन हैं। वह सारे भोगी हैं। इस माया से बाहर निकलकर विश्वनाथ के लिए अपने समय, धन, शक्ति युक्ति को खर्च करने वाले योगी हैं। यही शक्तिशाली हैं। शक्तिशाली अल्प चीजों के प्रति आकर्षित नहीं होते हैं। अत्यंत शक्तिशाली भगवान के प्रति आकर्षित होते हैं यानी ध्यान करते हैं।

हमें भी भगवान के प्रति आकर्षित होने के लिए ध्यान करना है। ध्यान करते हुए अपनी शक्ति का विकास करना है। प्रयत्न के समय क्या हमारे अंदर शक्ति बढ़ती है या नहीं? जानने के लिए हमारे कार्य और विचार पर गौर करने से हमें स्वयं पता चल जाएगा। अगर हमारे कार्य और विचार प्रासंगिक होंगे तो हमारे अंदर शक्ति नहीं होगी। लेकिन अगर इसके विरुद्ध है यानी आध्यात्मिक है, तो हमारे अंदर शक्ति होगी।

'त्रिकरण' यानी विचार, बात, व्यवहार, जितना अधिक भगवान से संबंधित होते हैं, यानी आत्मा से संबंधित होते हैं, हम उतने अधिक 'शक्तिशाली' होते हैं। इसके विरुद्ध अगर हमारा 'त्रिकरण' प्राकृतिक चीजों से संबंधित होता है, तो हम 'शक्तिहीन' होते हैं।

हम जितने शक्तिहीन होंगे, उतने दुख में रहेंगे। हम जितने शक्तिशाली होंगे, उतने खुश रहेंगे। यही हमारे दुख और आनंद का कारण है।

इसलिए विश्व को छोड़िए, विश्वनाथ को पकड़े रखिए। ध्यान कीजिए। ध्यान करने से विश्वनाथ प्राप्त होते हैं। ध्यान करना विश्वनाथ को पकड़े रखने के समान है। ध्यान छोड़ना विश्वनाथ को छोड़ने के बराबर है। शक्ति के विकास के लिए ध्यान है, विश्वनाथ को पकड़े रखने के लिए ध्यान है। दुख से बाहर निकलने के लिए ध्यान है। शाश्वत आनंद प्राप्त करने के लिए ध्यान है।

“पिता से प्रेम कीजिए!
पिता की संपत्ति से नहीं!”

अपने पिता को चाहने वाले बच्चों पर पिता को भी प्रेम होता है। बच्चों के एक बार मांगने पर अपनी सारी संपत्ति उनके नाम कर देते हैं।

इस दुनिया में बहुत सारे लोगों को अपने पिता पसंद नहीं हैं। क्योंकि उन्हें पिता से नहीं, उनकी संपत्ति से प्रेम होता है। वह हमेशा अपने पिता की संपत्ति का इंतजार करते हैं। संपत्ति के लिए पिता को तकलीफ पहुंचाने वाले भी होते हैं।

कुछ लोग अपने पिता की संपत्ति के लिए उनसे प्रेम करते हैं। इनको पिता की संपत्ति से प्रेम होता है। अपने पिता से प्रेम करने का नाटक करते हैं। लेकिन अंदर का इरादा पिता की संपत्ति को प्राप्त करना होता है। बहुत कम लोग पिता की संपत्ति नहीं, बल्कि पिता से प्रेम करते हैं।

इसी प्रकार, भगवान सारे मनुष्यों के पिता हैं। इस धरती की सारी संपदा भगवान की है। उन्हीं की संपत्ति है!

सारे मानवों को भगवान से अधिक भगवान की संपत्ति होने वाले संसार से प्रेम है। इसलिए सब पूजा, प्रार्थना, नमाज करके भगवान की संपत्ति मांगते हैं। लेकिन भगवान को कोई नहीं मांगता है। हमेशा भगवान से इच्छाएं मांगते हैं। भगवान प्रदान करते हैं इसलिए भगवान की प्रार्थना करते हैं। प्यार जताते हैं। मांगी गई चीजों को ना देने पर भगवान बदलते हैं यानी धर्म बदलते हैं। तस्वीर बदलते हैं। इन सब लोगों को भगवान नहीं, बल्कि भगवान की संपत्ति से प्रेम है। “इन्हें पसंदीदा चीजें प्रदान करने के कारण यह भगवान को पसंद करते हैं।”

पिता की संपत्ति प्राप्त करने के लिए एड़ी चोटी का जोर लगाते हैं। इसी तरह पिता होने वाले भगवान की संपत्ति प्राप्त करने के लिए मानव पूजा, स्त्रोत और भजन करते हैं। अगर इन सबसे उनकी इच्छा पूरी नहीं हुई तो खुद को तकलीफ देने वाले कार्य शुरू करते हैं। पहले थोड़ा दर्द होने वाले यानी उठक बैठक, साष्टांग प्रणाम

जैसे कार्य, बाद में खुद की हिंसा करने वाले काम जैसे पहाड़ चढ़ना, अंगारों पर चलना, कांटों पर चलना या आत्म आहुति देना या आत्महत्या करना।

इन सबसे कोई फायदा नहीं है। इन सबसे अधिक भगवान को चाहना है। उनको पसंद करना है। वही सच्चा भक्त होगा। ऐसे भक्तों को मांगी गई चीजें प्राप्त होंगी। भगवान का अनुग्रह प्राप्त होगा। भगवान को पसंद किए बिना भगवान की आरती को पसंद करने से भगवान कैसे अनुग्रह करेंगे? इसलिए प्रेम भगवान की संपत्ति से नहीं, बल्कि भगवान से करना चाहिए। "पिता की संपत्ति से नहीं, बल्कि पिता से प्रेम करना है।"

इसलिए जानिए कि "इच्छा मांगने वाला भगवान से प्राप्त होने वाली चीजों को मांग रहा है, इच्छा ना मांगने वाला भगवान को मांग रहा है"। बिना किसी इच्छा के आराधना कीजिए। इसलिए हर किसी के पिता होने वाले भगवान से प्रेम करना है, उनकी संपत्ति से नहीं। भगवान को प्राप्त करने की कोशिश कीजिए। पिता को प्राप्त करना और पिता की संपत्ति प्राप्त करना दोनों एक ही हैं क्या? इसलिए पहले पिता को प्राप्त कीजिए!

बिना किसी इच्छा मांगे रहने के लिए सबसे पहले मन को काबू में करना आवश्यक है। यानी ध्यान करना है। इसी तरह अंदर आत्मा रूप में मौजूद भगवान पर ध्यान रखना है। प्रतिफल की अपेक्षा किए बिना पवित्र भाव से ध्यान करना है। वही पिता से प्रेम करने वाले बनेंगे।

क्या भगवान से प्रेम करने से भगवान भी हमसे प्रेम करेंगे? अगर भगवान हमें पसंद करते हैं तो बिना मांगे ही हम पर अनुग्रह करेंगे ना? इसलिए सबसे पहले "पिता से प्रेम कीजिए। पिता की संपत्ति से नहीं!"

"हमें सदा याद रखना है, हम सब भगवान हैं।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“सब एक है!”

हाथ, पैर, आंख, कान, जीभ, ऐसे कई सारे अंग और भाग मिलकर मानव की ज्ञानेंद्रियाँ बने हैं। सारे मिलाकर एक हैं, यानी मानव हैं। हर एक अंग अपना अपना कार्य करता है। हर अंग का अपना अपना नाम है। चलने वाले को पैर कहते हैं। काम करने वाले को हाथ कहते हैं। सुनने वाले को कान कहते हैं। देखने वाले को आँख कहते हैं। बात करने वाले को जीभ कहते हैं। इस तरह विविध काम करने वालों का विविध नाम रखा गया है। लेकिन सब मिलाकर मानव कहा जाता है। मानव के लिए सारे आवश्यक हैं। सभी मानव की शक्तियाँ हैं। सारे अंगों में से किसी एक को महान नहीं कह सकते हैं क्योंकि सारे आवश्यक हैं। हर अंग का अपना महत्त्व है। कोई एक अंग ना होने से भी मानव संपूर्ण नहीं बनता है। इसलिए किसी एक अंग की महानता को लेकर विमर्श और बहस करना व्यर्थ है।

इसी प्रकार सब कुछ भगवान है। यहाँ अलग भगवान वहाँ अलग भगवान नहीं होते हैं। भगवान की हर एक शक्ति को अलग-अलग नाम दिया गया है। भगवान की लय शक्ति को शिव का नाम दिया गया है, भगवान की शासन शक्ति को इंद्र का नाम दिया गया है। इसी प्रकार, भगवान की अलग-अलग शक्तियों को अग्नि, वायु, सूर्य, वरुण जैसे नाम दिए गए हैं।

जिस तरह मानव के विविध कार्य करने वाली शक्तियों यानी भागों को विविध नाम दिए गए हैं, उसी तरह भगवान की विविध शक्तियों को विविध नाम दिए गए हैं। सारी शक्तियाँ भगवान हैं। इसमें कौन महान है या कौन नहीं है? कौन अधिक है और कौन कम है? नहीं होता है। सब एक होते हैं। सबकी अपनी अपनी विशिष्टता होती है। जिस तरह हर अंग की अपनी विशिष्टता होती है, उसी तरह हर शक्ति की अपनी विशिष्टता होती है। अंत में सब एक है। वही भगवान है। यह सारे एक भगवान के विविध रूप हैं। इसलिए सारे भगवान समान हैं, अलग अलग नहीं हैं। ऐसा कभी नहीं सोचना है। ऐसा सोचने वाला अज्ञानी होगा। देह के भाग मानव से भिन्न नहीं हैं। क्या हम एक मानव के शरीर के अंग को अलग-अलग समझेंगे? नहीं ना। क्योंकि

हमें पता है कि सारे अंग मिलकर संपूर्ण शरीर बनता है। इसी प्रकार, भगवान के विषय में भी होता है। सब जगह भगवान हैं। सारे रूप भगवान के हैं। इसलिए ग्रहण कीजिए कि भगवान एक हैं, दूसरा कोई नहीं है। हम सब भगवान के भाग हैं, हम उनसे भिन्न नहीं हैं।

अन्नामाचार्य जी ने कहा है ना, "ब्रह्ममोक्कटे! परा ब्रह्ममोक्कटे!" यानी ब्रह्म और परब्रह्म एक ही हैं। यह बात ध्यान करने से हमें समझ आएगी। समझ आएगा कि सारे भगवान एक हैं।

मनुष्य के शरीर के किसी अंग या किसी बाल को पकड़ने से क्या होगा? इसी प्रकार किसी एक भगवान को पकड़ने यानी उन पर ध्यान देने से भगवान के एक अंग को पकड़ने जैसा होगा। संपूर्ण मानव का आश्रय लेंगे तो सारे भागों का आश्रय लेने जैसा होगा। इसी प्रकार भगवान यानी परब्रह्म का श्रेय लेने से, उनकी आराधना करने से, सभी भगवान की आराधना करने जैसा है। ऐसा करने वालों को बाकी सारे देवताओं के पास जाए बिना ही अच्छे परिणाम प्राप्त होंगे। संपूर्ण भगवान को प्राप्त करने का मार्ग ध्यान है। इसलिए असली आराधना करने का मतलब ध्यान करना है। इस सृष्टि का मूल होने वाले उस भगवान का अंश होने वाली आत्मा की आराधना करना ऐसा है जैसे एक गिलास समंदर के पानी में सारे समंदर के लक्षण होते हैं, उसी तरह आत्मा में भगवान की सारी शक्ति होती है।

इसलिए भगवान के विश्वरूप के हर एक भाग में हर एक देवता को बताया जाता है।

इतना ही नहीं, "भगवान के विश्वरूप" में सहस्त्रबाहु दिखाए जाते हैं क्योंकि भगवान अनंत शक्ति स्वरूपी हैं। लेकिन साधारण रूप से भगवान के चार हाथ दिखाते हैं क्योंकि उनकी परिमित शक्ति होती है। देवताओं के दो हाथ दिखाए जाते हैं क्योंकि उनकी शक्ति और भी कम है।

मानव किसी भी रूप की सृष्टि कर सकता है। लेकिन उसके अंदर प्राण नहीं डाल सकता है। भगवान केवल रूप ही नहीं देते, बल्कि उनके अंदर संसार की शक्ति और प्राण डालते हैं। वह शक्ति केवल भगवान के पास है।

मुक्कोटी देवताओं में किसी की भी आराधना करने से पुण्य यानी भोग मिलता है, लेकिन दुख दूर नहीं होता है। मुक्कोटी देवता के समान होने वाले "परब्रह्म" यानी आत्मा की आराधना करने से यानी "ध्यान" करने से मोक्ष प्राप्त होता है। दुख दूर होता है।

इसी विषय को भगवद्गीता में श्री कृष्ण भगवान ने निम्न दिए गए श्लोक द्वारा बताया है,

श्लोक : **अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् ।**

देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि ।। ७ - २३ ।।

तात्पर्य : अल्प बुद्धि वाले लोगों का फल व्यर्थ हो जाएगा। जैसे देवता की पूजा करने वाले देवता को प्राप्त कर रहे हैं, मेरे भक्त मुझे प्राप्त कर रहे हैं।

जानिए कि "भगवान से महान कोई नहीं है, ध्यान से महान साधना कोई नहीं है"। इसलिए ध्यान कीजिए।

“मानव गगन से धरती पर पधारने वाले भगवान हैं!”

घर बनाने के लिए मानव अपना ज्ञान उपयोग करके उसकी योजना बनाता है, अपनी इच्छा शक्ति का उपयोग करके यानी मेहनत करके, काम करने वाले लोगों को नियमित करता है। अपनी क्रिया शक्ति का उपयोग करके घर का निर्माण करता है। यह सब अपने निवास के लिए बनाता है।

इसी प्रकार भगवान अपने द्वारा बनाई गई दुनिया में प्रकृति के सृजन के लिए, अनुभूति प्राप्त करने के लिए, इस संसार की खूबसूरती से खुश होने के लिए, उसके भौतिक रूप का आनंद लेने के लिए, भौतिक संसार को भौतिक रूप से अनुभव करने के लिए, भौतिक देह की जरूरत होती है। इसलिए भौतिक संसार में रहने के लिए भगवान ने भौतिक शरीर बनाया है।

अनंत शक्तिशाली होने वाले भगवान ने अपनी ज्ञान शक्ति, इच्छा शक्ति, क्रिया शक्ति का उपयोग करके बहुत सारे प्रकृति देवताओं का उपयोग करके, अपने शरीर का निर्माण किया है। इस प्रकार ८४ लाख जीवों का निर्माण किया है।

केवल एक जाति से जीवन मुश्किल होगा इसलिए तरह-तरह की जातियों का निर्माण किया है।

अकेले जीवन बिताना कठिन होगा इसलिए भगवान ने बहुत सारी जातियों को पैदा किया ताकि सब आपस में मिलजुलकर आनंद से सुख-दुख बाँटकर रह सकें। इस प्रकार भगवान ने बहुत सारे रूप धारण किए हैं। संसार में विविध रूप दिखाई देते हैं, लेकिन सभी एक हैं। वही भगवान है। सृष्टि का सृजन करने के लिए तरह-तरह के जीवों को उन्होंने बनाया है। अकेले जीवन बिता नहीं सकते हैं, इसलिए जरूरत के अनुसार जीव जातियों को बनाया है।

केवल यजमान के जीवन का अनुभव करना काफी नहीं होता है इसलिए काम वाले को पैदा करके, उसका अनुभव भी प्राप्त कर रहे हैं। इसी प्रकार, धोखा देने

वाले का रूप धारण करने वाला भी भगवान होता है। पुरुष और स्त्री भी भगवान ही हैं। दुख और सुख अनुभव करने वाले भी भगवान ही हैं। ज्ञानी, अज्ञानी सब भगवान हैं। निमित्त मात्र और साक्षी भूत बनकर भगवान ही अपनी लीला का अनुभव कर रहे हैं।

इसी प्रकार खनिज आदि के रूप में, वृक्ष जाति के रूप में, कृमि और कीटक जाति के रूप में अपनी सृष्टि का अनुभव कर रहे हैं। यह सारी सृष्टि भगवान के विनोद के लिए है। भगवान के अलावा यहाँ कोई और नहीं है। सब भगवान है। सब उनकी सृष्टि है। सब भगवान की माया है।

कहने वाले भगवान हैं। सुनने वाले भगवान हैं। जीतने वाले भगवान हैं। हारने वाले भी भगवान हैं। भगवान निर्माण हैं और भगवान ही विनाश हैं। सब भगवान के मनोरंजन के लिए है। सब भगवान की सृष्टि है। दृश्य और अदृश्य सब भगवान की माया है। दृश्य का अदृश्य दिखाई देना और अदृश्य का दृश्य दिखाई देना सब उनकी माया है।

इस बात को जाने बिना मानव भ्रांति में जीता आया है। जो उसके पास है उसे अपना समझ रहा है। अपनी संपत्ति को अपनी समझ रहा है। लेकिन ऐसा नहीं है। मानव समझ रहा है कि सब कुछ उसके द्वारा ही हो रहा है। लेकिन यह सब केवल एक भ्रम है। यह मैं या मेरा कुछ नहीं है। सब भगवान है।

घर बनाने के लिए और घर में आराम से जीवन बिताने के लिए बहुत सी सुविधाएं चाहिए। पानी के लिए पाइप चाहिए। बिजली के लिए तार चाहिए। बैठने के लिए कुर्सियाँ और सोफा चाहिए। सोने के लिए बिस्तर चाहिए। भोजन बनाने के लिए चूल्हा और पतीले चाहिए। खाना बनाने के लिए राशन चाहिए।

इसी प्रकार, भगवान को शरीर में रहने के लिए, शरीर उत्तम रहने के लिए कोशिकाएं, रक्त कोशिकाएं, तंत्रिका, पाचन नाल, विसर्जिक नाल, सब चाहिए। इसलिए सबकी व्यवस्था की गई है। ऐसे शरीर में भगवान आत्मा के रूप में प्रवेश करके, अपने द्वारा बनाई गई भौतिक सृष्टि की खूबसूरती को भौतिक रूप से देख रहे हैं। आनंद ले रहे हैं। प्रकृति देवता के साथ मिलकर शरीर के लिए आवश्यक सारी चीजों की व्यवस्था की गई है। केवल बचपन का अनुभव काफी नहीं होगा इसलिए

युवा अवस्था, वृद्ध अवस्था के अनुभव की व्यवस्था की गई है। इस तरह भगवान खा रहे हैं, पी रहे हैं। अनुभव कर रहे हैं। सुख दुख सब अनुभव कर रहे हैं। अपनी सृष्टि में उपस्थित नवरस को अनुभव कर रहे हैं।

इसलिए मानव को **"गगन से धरती पर पधारने वाले भगवान"** कहते हैं। धरती पर पधारने वाले भगवान खुद को मानव समझने लगते हैं। साधारण मानव जीवन उदार नहीं लगता है। फिर से किसी ज्ञानी के रूप में आकर, इस सारे ज्ञान को प्रदान करके, 'तुम मानव नहीं भगवान हो' बोध करके, ध्यान के मार्ग को बताकर वापस लौट जाते हैं। तब मानव रूपी होने वाले भगवान ध्यान साधना करके, ज्ञानी बनकर भगवान बन जाते हैं। यानी जान लेते हैं कि मानव भी भगवान हैं। आखिर में भागवत स्थिति प्राप्त करके ब्रह्मर्षि बन जाते हैं।

श्री तटवर्ती वीरा राघवराव का
हिन्दी किताब

1. भगवान क्या हैं । Rs.250/-
2. आत्म शास्त्र । Rs.200/-
3. ध्यान विद्या । Rs.160/-
4. सत्य मार्ग । Rs.150/-

Translated in Hindi & Published by :
MB Publishing House, New Delhi
www.mbpublish.com
+91-8447749297

/mbpublishinghouse
@mbpublishinghouse

For Books please contact :
Tatavarthi Veera Raghavarao
BHIMAVARAM. Ph: 94403 09812

“हमें बेइज्जत कर दिया है”

कुछ माता-पिता दुखी होते हैं कि उनके बच्चों ने उनको बेइज्जत कर दिया है। दुखी होकर अपने बच्चों को कोसते रहते हैं। ऐसा बहुत सारी परिस्थितियों में होता है।

परीक्षा में फेल होने या कम नंबर मिलने से, स्कूल या कॉलेज में कोई गलत काम करने से, यानी चोरी, दूसरे बच्चों को मारना, लड़कियों को छेड़ना आदी से माँ बाप ऐसा महसूस करते हैं। अपने बच्चों को सही रास्ते पर लाने के लिए उन्हें मारते पीटते हैं और दुखी होते हैं कि उनकी इज्जत खराब हो गई है।

बच्चों का बड़े होकर लव मैरिज करने से या उनकी लड़की का लड़कों के साथ घूमने से, दूसरे धर्म के लोगों के साथ शादी करने से माता-पिता बहुत दुखी होते हैं। अपनी बेइज्जती के बारे में दुखी होते हैं। इतना ही नहीं, शादीशुदा बेटा दारू पीकर रोड पर पड़ा हुआ मिलने से या ताश खेलने से, या वैश्य के पास पुलिस के हाथ पकड़े जाने से या शहर भर से कर्ज लेने से, लड़ाई झगड़े करने से, गांव में बुरा नाम कमाने से, उनके माता-पिता दुखी होते हैं कि उनके बच्चों ने उनकी सारी इज्जत गंवा दी है। कुछ माता-पिता अपने बच्चों को डांटते हैं और कुछ लोग घर से बाहर धकेल देते हैं।

इस प्रकार माता-पिता दुखी होते हैं कि उनके बच्चों ने उनकी इज्जत खराब कर दी है। लेकिन वह नहीं सोचते हैं कि वे भी ऐसा ही कर रहे हैं। बहुत दुखी हो रहे हैं कि उनके बच्चों ने उनको बेइज्जत कर दिया है, लेकिन वह नहीं सोच रहे हैं कि वे अपने पिता होने वाले भगवान को बेइज्जत कर रहे हैं। भगवान सबके पिता हैं। सबके पिता भगवान इसलिए हैं क्योंकि हम सब भगवान की आत्मा हैं, लेकिन देह नहीं हैं।अब उपस्थित लोग केवल भौतिक शरीर से माता-पिता हैं लेकिन आत्मा से नहीं। माता-पिता केवल शरीर को तैयार कर सकते हैं, शरीर के अंदर की आत्मा को परलोक वाले भगवान तैयार करते हैं। ‘आत्मा’ भगवान द्वारा छोड़ा गया अंश है। इसलिए भगवान को हम पिता मानते हैं। पिता होने वाले भगवान अंशात्मा के रूप में सभी के अंदर उपस्थित हैं। यानी हर एक व्यक्ति के पिता भगवान हैं।

बाहर के शरीर से किए जाने वाले कार्य, अंदर की आत्मा यानी भगवान से संबंधित होते हैं। देह अच्छा काम करता है तो आत्मा यानी भगवान आनंदित होता है। देह बुरा काम करता है तो भगवान दुखी होता है। यानी पिता होने वाले भगवान को बेइज्जत करने जैसा होता है।

पापी कार्य, हिंसा, धोखाधड़ी करने से आत्मा बेइज्जत होती है। हम समझ सकते हैं कि बेइज्जत करने के लिए भगवान दुखी हो रहे हैं। हमारे बच्चे गलत काम करते हैं तो हम दुखी होते हैं, लेकिन हम गलत काम करके भगवान को दुखी कर रहे हैं ना? इसके बारे में हम क्यों नहीं सोच रहे हैं?

क्या हमारे पिता साधारण हैं? वह महान अनंत शक्तिशाली हैं। समस्त लोकों के जीव के कारक हैं, सर्वांतर्यामी, सर्वव्यापी, सत्य रूपी और प्रेम स्वरूपी हैं। ऐसे महान शक्तिशाली होने वाले पिता के बच्चे होकर, अच्छे गुणों के विरुद्ध व्यवहार करना क्या भगवान को बेइज्जत करने जैसा नहीं है? उनको दुखी करने जैसा नहीं है?

इसलिए **"देह संबंधित बच्चे द्वारा बेइज्जत होने से दुखी मत हो। जानिए कि आत्म संबंधित पिता को बेइज्जत नहीं करना है।" "अगर हम अपने पिता को बेइज्जत करेंगे तो हमारे बच्चे हमें बेइज्जत करेंगे। अगर हम अपने पिता की इज्जत करेंगे तो हमारे बच्चे हमारी इज्जत करेंगे।"**

जानिए कि केवल अपनी ही नहीं, बल्कि अपने पिता की इज्जत भी आवश्यक है।

भगवान के बच्चे होने वाले हमें सत्य संधि बनना है। धर्म आचरण करना है। स्वार्थ को छोड़ना है। हम सब लोग एक ही पिता के बच्चे हैं। इसलिए हमारे साथ वाले जानवरों को नहीं मारना है। उनकी हिंसा नहीं करनी है। उनका मांस नहीं खाना है। किसी को धोखा नहीं देना है। किसी को क्षति नहीं पहुंचानी है। किसी की बेइज्जती नहीं करनी है। सबका आदर करना है। अपने समान प्यार देना है। ऐसा करने से हम अपने पिता की इज्जत बचाने वाले बनेंगे। इसके विरुद्ध व्यवहार करने से पिता को बेइज्जत करने वालों में शामिल होंगे। उनकी आत्मा को शांति नहीं पहुंचेगी।

इतना ही नहीं, हमें हमेशा याद रखना है कि आत्मा भगवान है। आत्मा को नीचे गिराने वाले कार्य नहीं करने हैं। आत्मा को बेइज्जत नहीं करना है। ऐसा करने से क्षति हमें ही प्राप्त होगी। यही गीता में श्री कृष्ण द्वारा बताया गया है।

श्लोक : **उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।**

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।। ६ - ५।।

तात्पर्य : मनुष्य को अपने द्वारा स्वयं का उद्धार करना चाहिए और अपना अध: पतन नहीं करना चाहिए क्योंकि आत्मा ही आत्मा की मित्र है और आत्मा (मनुष्य स्वयं) ही आत्मा का (अपना) शत्रु है।

इसलिए असभ्य और अनुचित काम नहीं करना चाहिए। दूसरों के पैर छूने का मतलब अनंत शक्ति स्वरूप होने वाले भगवान को दूसरों के पैरों के आगे डालना है। इसी प्रकार पत्थर, वृक्ष, फूल के आगे नमस्कार करना भगवान का अपमान करने जैसा होता है। इसलिए ऐसा कभी मत कीजिए। संसार में सब समान हैं इसलिए सब के प्रति स्नेह भाव से व्यवहार कीजिए।

किसी के आगे हाथ फैलाकर मत मांगिए। हीन या दीन व्यवहार मत कीजिए। सफल इंसान की तरह व्यवहार कीजिए। हीन व्यवहार करके आत्मा को यानी भगवान यानी अपने पिता को बेइज्जत नहीं करना है। अपने पिता को बेइज्जत करने का हक हमें नहीं है।

अपने पिता के मान की रक्षा हमें करनी है। उन्हें ध्यान में रखते हुए हमें व्यवहार करना है।

इसका केवल एक ही मार्ग है। सबको ध्यान करना है। तभी यह सत्य जान पाएंगे। शक्तिशाली बनेंगे। हीन और दीन व्यवहार नहीं करेंगे। अपने पिता की इज्जत को बनाए रखेंगे। उनका अनुग्रह प्राप्त करेंगे। इसलिए सबको ध्यान करना है।

“मानव के तुच्छ व्यवहार का कारण पत्थर को भगवान मानना है!”

बहुत लोग मूर्ति को भगवान मानकर आराधना करते हैं। मूर्ति को भगवान मानकर आराधना करने का मतलब, मूर्ति को स्वयं से अधिक महान मानना है ना? स्वयं से अधिक मूर्ति को महान समझने का मतलब स्वयं को अल्प समझना है ना? ऐसी मान्यता को अपने मन में रखने से महान मानव “यद्भावाम तद्भवति” के अनुसार पत्थर से भी अल्प बन जाएगा।

भगवान की स्मृति में हर जाति, चाहे छोटी ही सही, सबका अच्छा चाहती है और सबका अच्छा करती है। किसी का अपकार नहीं करती है। हमेशा उपकार करती है। दीवार बनाने के लिए, भवन बनाने के लिए, रोड बनाने के लिए, जमीन पर बिछाने के लिए, विविध रूप में मदद करती है। किसी का अपकार नहीं करती है।

“अपकार करने वालों पर उपकार करना सृष्टि में उत्तम है। उपकार करना उत्तम है। उपकार या अपकार किए बिना रहना मध्यम है। अपकार करना अधम है। उपकार करने वाले पर अपकार करना अत्यधिक अधम है।”

गौर करने पर पता लगेगा कि मानव सब पर अपकार कर रहा है। उपकार करने वाले जानवरों पर भी अपकार कर रहा है। उन्हें मार रहा है और उनका भक्षण कर रहा है। अपकार करना तुच्छ गुण है। मानव के तुच्छ व्यवहार का कारण क्या है?

इसका मुख्य कारण मानव का खुद को अल्प समझना है। सबकी आराधना करने का मतलब स्वयं को सबसे अल्प मानना है।

सृष्टि में पत्थर (खनिज जाति) से निचला स्तर नहीं है। क्योंकि पत्थर अचल है, शक्तिहीन है। सृष्टि में खनिज जाति से अधिक वृक्ष जाति महान है क्योंकि वृक्ष चल है। वृक्ष के अंदर बढ़ने की शक्ति है। वृक्ष जाति से जंतु जाति महान है क्योंकि जंतु संचार करते हैं, प्रजनन और विकास भी करते हैं।

इन सबसे अधिक सृष्टि में ८४ लाख जीवों के बीच एक मानव जाति महान है। क्योंकि मानव संचार करता है, सोचता है, प्रजनन करता है। संसार में किसी भी जाति के अंदर ना होने वाली शक्ति केवल मानव जाति के अंदर है। इसलिए सारे जीव मानव जाति के काबू में हैं। उन जीव जंतुओं का उपयोग करने का तरीका मानव को पता है। इसलिए मानव जीव जंतु का उपयोग करके लाभ प्राप्त कर रहा है।

इतना ही नहीं, मानव अपनी बुद्धि की शक्ति से बहुत सारी चीजों का निर्माण कर सकता है। कर भी रहा है। यात्रा करने वाले साधन जैसे गाड़ी, बाइक, रेल, हवाई जहाज जैसे बहुत सारे साधन मानव ने बनाए हैं। हवाई जहाज द्वारा मानव गगन तक पहुंच चुका है। श्रवण साधन से दूर की आवाजें सुन सकता है। टीवी और कंप्यूटर से बहुत सारे चित्र का निर्माण कर रहा है और दूर के चित्र करीब से दिखा पा रहा है। एक ही समय में बहुत सारे समाचार सारी दुनिया तक पहुंचा पा रहा है। टेलीविजन द्वारा दूर के चित्र देख पा रहा है। रॉकेट का निर्माण करके दूसरे ग्रह तक पहुंच रहा है।

ऊपर दिए गए विषय पर गौर करने से पता लगेगा कि अन्य जाति से मानव जाति बहुत उत्तम और महान है। इतना ही नहीं, कुछ मानव आध्यात्मिक मार्ग में साधना करके, शक्तिशाली बनकर, संसार में नहीं दिखाई देने वाले बहुत सारे रहस्य को ढूंढकर निकाला है। हजारों करोड़ों लोकों की खोज की है। यंत्र शक्ति से ही नहीं, बल्कि अपनी दिव्य शक्ति से कई सारे रहस्य जाने हैं। यंत्र शक्ति से बड़े दुख निवारण और शाश्वत आनंद मार्ग की भी खोज की है। इसलिए भगवान की सृष्टि में अन्य जातियों से अधिक मानव जाति महान और विशिष्ट है, शक्तिशाली है।

मानव द्वारा आराधना की जाने वाली मूर्ति भी मानव द्वारा बनाई गई है। मानव निर्माण नहीं करता तो एक पत्थर को इतना खूबसूरत रूप कैसे मिलता? खूबसूरत मूर्ति बनाने वाला भी मनुष्य ही है। पत्थर को मूर्ति बनाना केवल मानव द्वारा संभव है। किसी भी कोने से देखने पर मानव पत्थर से अधिक महान लगता है।

पंडित कहते हैं कि सृष्टि के परिणाम क्रम में खनिज जाति से मानव जाति तक पहुंचने के लिए हजारों करोड़ों साल लगे हैं।

एक बार सोचिए, खनिज जाति से अधिक मानव जाति कितनी विकसित है। तब आपको अच्छे से समझ आएगा। किसी पत्थर या वृक्ष को मानव स्तर पर पहुंचने के लिए हजारों करोड़ों साल लगते हैं, जिसका हम अंदाजा भी नहीं लगा सकते हैं।

केवल एक मानव जाति के पास ही भगवान बनने का मौका है। अन्य किसी जाति के पास नहीं है। अन्य किसी जाति की भगवान बनने की हैसियत नहीं है। इसलिए कहा गया है, **"विकसित मानव भगवान है"** इतना ही नहीं, **"विकसित होने वाला मानव भी भगवान है"** यानी **"मानव माधव बन सकता है"।** जिस तरह इल्ली में से खूबसूरत तितली निकलती है, ठीक उसी तरह मानव से भगवान बाहर निकल सकते हैं।

इल्ली खाना पीना छोड़कर, कच्चे रेशम का ककून बनाकर थोड़े दिन उसमें रहने के बाद जिस प्रकार खूबसूरत तितली बन जाती है, उसी तरह मानव भी खाना पीना छोड़कर ध्यान साधना करेगा तो "मानव माधव बन जाएगा"। इस प्रकार परिवर्तित होने वाले, हमारे द्वारा आराधना किए जाने वाले भगवान हैं। जैसे कि बुद्ध, जीसस, महावीर, रमणा महर्षि, रामकृष्ण परमहंस, पत्री जी, जैसे बहुत सारे लोग। इसलिए जानिए कि पत्थर से कई गुना अधिक महान मानव है। वह अत्यंत शक्तिशाली है।

इतना महान मानव तुच्छ व्यवहार क्यों कर रहा है? असफल व्यक्ति की तरह मूर्तियों के आगे हाथ फैलाकर क्यों मांग रहा है? हर छोटी चीज के लिए हाथ जोड़कर क्यों मांग रहा है? गिड़गिड़ाकर पत्थर की मूर्ति के आगे क्यों मांग रहा है? छोटी समस्या को देखकर क्यों ऐसे डर रहा है?

सब कुछ करना चाहता है, लेकिन कुछ नहीं कर पा रहा है। सत्य बोलना चाहता है लेकिन नहीं बोल पा रहा है। धार्मिक जीवन जीना चाहता है, लेकिन नहीं कर पा रहा है। सबसे प्यार करना चाहता है, लेकिन नहीं कर पा रहा है। हिंसा नहीं करना चाहता है, लेकिन हिंसा कर रहा है। मनुष्य को अपने विचार, बातों और कार्य पर भी काबू नहीं है। जागरूकता नहीं है। मानव जन्म लेकर मानव की तरह व्यवहार

किए बिना, मानवता को भूलकर, सब एक है - सत्य को जाने बिना, स्वार्थ से सबको क्षति पहुंचा रहा है। सबको दुखी कर रहा है। इतने महान मानव को इस परिस्थिति से गुजरने की जरूरत क्या है? इसके पीछे का कारण क्या है?

इस प्रकार महान मानव नीचे गिर गया है। तुच्छ बन गया है। हीन व्यवहार कर रहा है। क्योंकि "मनुष्य स्वयं को अल्प मान रहा है"। मानव का व्यवहार अपने अंत होने की भावना को दर्शाता है। स्वयं को अल्प मानकर वृक्ष, पत्थर और जंतुओं की आराधना करना मानव के अल्प व्यवहार का उदाहरण है। जब तक मानव भगवान समझकर मूर्ति की आराधना करता रहेगा तब तक मानव का व्यवहार ऐसा ही रहेगा।

इस पर योगी वेमाना ने कहा है,

"पूजा सेया सेया पूजारी तानाये -
पूज्य वस्तुवेन्न भुविनि ताने!
याडा पूजा सेयु? नेल्ला दिक्कुला ताने!
ताने नेनु, नेने ताने, वेमा!"

तात्पर्य : पूजा करते करते स्थूल पुजारी बनेंगे। इससे अधिक कोई फायदा नहीं है। असल पूजा किसकी करनी है? पूजा की वस्तु क्या है? मुझे किसकी पूजा करनी है? सोचिए। "पूजा के काबिल वस्तु मैं ही हूँ!" यानी "मैं ही पूजा की वस्तु हूँ!" सबका कारक मैं हूँ। क्योंकि "अहम् ब्रह्मास्मि" कहा गया है ना!

विग्रह आराधना यानी पत्थर की आराधना छोड़कर "स्वयं की आराधना" करने से मानव व्यवहार बदल जाएगा। कार्य जल्दी पूरे होंगे। इसलिए एक योगी की तरह ध्यान करना है। पत्थर को नहीं, स्वयं को भगवान मानना है। 'अहम् ब्रह्मास्मि' का अर्थ जानना है। धीर बनना है।

"प्रत्येक रोग का मूल कारण आत्मज्ञान की कमी है!"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

“हम इहलोक के निवासी हैं या परलोक के?”

सृष्टि के दो प्रकार हैं :-

(1) इहलोक , (2) परलोक

दृश्य लोक इहलोक और अदृश्य लोक परलोक है। हम किस लोक से संबंध रखते हैं? हम किस लोक के निवासी हैं? इहलोक या परलोक? इस विषय पर सोचना बहुत आवश्यक है।

क्योंकि अगर हम इहलोक वासी हैं तो इस समय हमारे द्वारा किए जा रहे विचार सही हैं। अच्छे से सोचिए, अगर हम सचमुच परलोक निवासी हैं तो हमारी जीवनशैली अलग होगी। सबसे पहले हमें इस बात का निर्धारण करना है, क्योंकि हम सब लोगों का व्यवहार इहलोक निवासियों जैसा है।

हम सब भूलोक निवासियों की तरह व्यवहार कर रहे हैं। हमेशा हमेशा के लिए यहीं पर रह जाने जैसा व्यवहार कर रहे हैं। यहाँ मौजूद चीजों को महत्त्व दे रहे हैं। यानी भूलोक की संपदा, संपत्ति, ऐश और आराम, प्रसिद्धि, नाम को महत्त्व दे रहे हैं। केवल महत्त्व देना ही नहीं, बल्कि उनको प्राप्त करने के लिए अपना सारा जीवन मेहनत करते हुए व्यर्थ कर रहे हैं। हम अधर्म का रास्ता भी अपना रहे हैं। पाप कर रहे हैं। जैसे हम हमेशा के लिए यहीं पर रह जाने वाले हैं। जैसे कि यहाँ पर मौजूद सारी चीजें हमारी हैं! हम इन्हें शाश्वत समझकर भ्रम में जी रहे हैं।

यहाँ मौजूद कुछ लोगों को हम अपने रिश्तेदार, दोस्त और दुश्मन मान रहे हैं। कुछ कीमती चीज मिलने पर खुश हो रहे हैं। कीमती चीज खोने पर दुखी हो रहे हैं। दूसरों को देखकर ईर्ष्यालु बन रहे हैं। दूसरों के पास जो है, अगर वह हमारे पास नहीं है तो ईर्ष्या भावना हमारे अंदर पैदा हो रही है। सबको अलग अलग समझ रहे हैं। केवल अपने लोगों की सुख शांति चाहते हैं। सफलता मिलने से सातवें आसमान पर चढ़ जाते हैं। असफल होने से पाताल तक पहुंचकर दुखी हो जाते हैं। सबसे महान जीवन बिताना चाहते हैं। यह सारी चीजें हमारे भूलोक निवासी होने को दर्शाती हैं।

सच में हम किस लोक के निवासी हैं? किस लोक से हमारा संबंध है? क्या हम भूलोक निवासी हैं या नहीं? इसके बारे में सबसे पहले हमें सोचना है।

क्योंकि अगर हम भूलोक निवासी ना होकर परलोक निवासी हैं तो हमारे द्वारा किए जाने वाले काम अलग होंगे।

इसे जानने के लिए सबसे पहले हमें अपने आप के बारे में पता करना है। यानी मैं देह हूँ या अत्मा? अगर आप देह हैं तो भूलोक निवासी हैं। अगर आप आत्मा हैं तो परलोक निवासी हैं। क्या आप देह हैं या आत्मा? जानने के लिए सबसे पहले एक विषय जानना पड़ेगा।

सबसे पहले निर्णय लेना है कि "क्या मैं मरने के बाद रहूँगा या नहीं? जीवन अभी बाकी है या नहीं? अगले जन्म अभी बाकी हैं या नहीं?" इसके बारे में जानने के लिए सबसे महान होने वाले श्री कृष्ण भगवान द्वारा सुनाई गीता का श्लोक जानना पड़ेगा।

श्लोक : **जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।**
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।। २ - २७ ।।

तात्पर्य : जन्म लेने वाले की मृत्यु निश्चित है और मरने वाले का जन्म निश्चित है। इसलिए जो अटल है, अपरिहार्य है, उसके विषय में तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।

इससे हमको पता चलता है कि मृत्यु के बाद भी हम उपस्थित होते हैं। फिर मरने वाला कौन है? केवल शरीर मरता है। मृत्यु के बाद दो चीजें होती हैं, 'दहन' और 'ऊपर चले जाना'। देह का दहन होता है। आत्मा ऊपर चली जाती है। यानी हम दहन होंगे या ऊपर चले जाएंगे? हम ऊपर चले जाते हैं।

क्योंकि अगर हम दहन होने वाले शरीर होते तो हम मौजूद नहीं होते। लेकिन ऊपर दिए गए श्लोक से पता चलता है कि मृत्यु के बाद भी हम मौजूद होते हैं। इसलिए आत्मा बाकी रह जाति है और ऊपर चली जाती है। अब तक हमें समझ आ गया होगा कि हम आत्मा हैं।

जब आत्मा हम हैं तो हम समझ सकते हैं कि आत्मा का शाश्वत स्थान परलोक है। प्रश्न उठता है कि "हम सब भूलोक में क्यों मौजूद हैं? हमारे शाश्वत स्थान से यानी परलोक से इहलोक क्यों आए हैं?" इस प्रश्न का समाधान प्राप्त करने से धरती पर करने वाला कार्य समझ आएगा। धरती पर जीने का तरीका समझ आएगा। इसे जानकर बिताने वाला जीवन उचित जीवन है। सदुपयोग किया गया जीवन है। इसके अलावा जीने वाला जीवन चाहे इहलोक में कितना भी उचित हो, वह व्यर्थ ही होता है।

हम परलोक से क्यों आए हैं? इहलोक में क्या करने आए हैं? इसे जानने के लिए सबसे पहले हमें परलोक के बारे में जानना पड़ेगा। इहलोक में जिस तरह बड़े-बड़े महल होते हैं उसी तरह परलोक में भी करोड़ों लोक होते हैं। यानी धरती पर जिस तरह झोपड़ी, कच्चा घर, पक्का घर, भवन, बंगला होता है यानी कुछ घरों में सुविधाएं होती हैं और कुछ में नहीं होती हैं, कुछ आरामदायक होते हैं और कुछ आरामदायक नहीं, इसी तरह, परलोक में ऊर्ध्व लोक, अधोलोक होते हैं। सारी सुविधाएं होने वाले लोक को ऊर्ध्व लोक कहा जाता है। उनके विरुद्ध वालों को अधोलोक कहा जाता है। सुविधा वाले लोक को उच्च लोक कहते हैं। सुविधा नहीं होने वाले लोक को अधोलोक कहते हैं।

लाखों-करोड़ों लोकों को योगियों ने ७ ऊर्ध्व लोक और ७ अधोलोक में विभाजित किया है। वह हैं :-

1) भूलोक , 2) भुवर्लोक , 3) स्वर्लोक, 4) महालोक, 5) जनलोक, 6) तपोलोक और 7) सत्यलोक नामक ऊर्ध्व लोक।

इसी प्रकार :-

1) अतल, 2) वितल , 3) सुतल, 4) तलातल , 5) रसातल , 6) महातल और 7) पाताल नामक अधोलोक।

अगर कोई धरती पर अपने शरीर से धोखा और पाप करते हुए अपवित्र और अधर्म से जीवन बिताते हुए हिंसा, जीव हिंसा और अपराध करते हुए रहेगा तो मृत्यु के बाद अधोलोक जाएगा।

इसके विरुद्ध अगर कोई पवित्र और धार्मिक जीवन बिताते हुए, किसी को धोखा दिए बिना, कोई पाप किए बिना, जानवरों पर दया करते हुए, उनकी हिंसा किए बिना, सबको प्यार करते हुए पुण्य कार्य करेगा तो वह मृत्यु के बाद ऊर्ध्व लोक पहुंचेगा।

इसलिए कहा जाता है कि उपकार करने वाले देवता स्वर्ग और हिंसा करने वाले राक्षस पाताल लोक में होते हैं। धरती पर किए गए कार्य के अनुसार परलोक प्राप्ति होती है।

भूलोक में करने वाले कार्यों के आधार पर हम परलोक के किसी ना किसी लोक में होते हैं।

परलोक में चाहे किसी भी लोक में हों, हम विकास करना चाहते हैं, यानी ऊपर के लोकों तक पहुंचना चाहते हैं। यानी परलोक में हम "उपस्थित लोक से अधिक उच्च लोक तक पहुंचना चाहते हैं"। परलोक में उच्च लोक तक जाने के लिए सभी को वापस धरती पर आना पड़ेगा! मानव शरीर धारण करना पड़ेगा! उस मानव शरीर से ध्यान साधना करनी पड़ेगी! ध्यान साधना की शक्ति से उच्च लोक की प्राप्ति होगी। इसके अलावा कोई दूसरा मार्ग नहीं है।

देवताओं को भी उच्च लोकों तक पहुंचने के लिए धरती पर मानव जीवन लेना पड़ेगा। साधना करनी पड़ेगी। इसलिए मानव जन्म को इतना महान कहा जाता है। इतना ही नहीं, मानव जन्म को दुर्लभ भी कहा जाता है।

परलोक में रहने वाले कोई भी हों, परलोक से शाश्वत सत्य लोक तक पहुंचना चाहते हैं। क्योंकि सत्यलोक तक पहुंचने तक सभी को भूलोक आते रहना पड़ेगा। बार-बार मानव जन्म लेना पड़ेगा।

इस पर श्री कृष्ण भगवान ने गीता में कहा है,

श्लोक : **आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।**
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते।। ८ - १६ ।।

तात्पर्य : हे अर्जुन! ब्रह्मलोक तक के सब लोक पुनरावृत्ति स्वभाव वाले हैं। परंतु हे कौन्तेय! मुझे प्राप्त हुए सत्य लोक पर पुनर्जन्म नहीं होता है।

बार-बार धरती पर आ सकते हैं लेकिन भूलोक जीवन में भोग-भाग्य के साथ सुख-दुख भी होते हैं। इसलिए योगी भूलोक जीवन से शाश्वत रूप से बाहर निकलने की कोशिश करते हैं। ध्यान साधना को महत्त्व देते हैं।

जब हम परलोक में होंगे तो परलोक से उच्च लोक तक पहुंचने की इच्छा रखेंगे। इसे प्राप्त करने के लिए, ध्यान साधना करने के लिए, कोई ना कोई शरीर धारण करके भूलोक आएंगे। यह सब शरीर धारण करके जन्म लेने के बाद भूल जाएंगे।

हम स्वयं को भूलोक निवासी समझने लगेंगे। भूलोक का अनुभव करने की शुरुआत करेंगे। पैसा कमाकर, धन कमाकर, नाम कमाकर इहलोक यानी धरती पर प्रगति हासिल करने की कोशिश करेंगे। परलोक में प्रगति प्राप्त करने की कोशिश नहीं करेंगे। इहलोक की चीजों को हासिल करना चाहेंगे, परलोक की नहीं। इहलोक को महान समझेंगे। लेकिन हम जानते नहीं हैं कि परलोक में इहलोक से अधिक आनंद मिलता है। तात्कालिक चीजों को मुख्य समझेंगे। शाश्वत चीजों की पूजा करेंगे। इहलोक संपत्ति को महत्त्व देंगे। परलोक ज्ञान को महत्त्व नहीं देंगे। **"हमेशा हम स्वयं को इहलोक निवासी समझेंगे। लेकिन अपने परलोक निवासी होने की बात भूल जाएंगे।"** इहलोक की चिंता करेंगे। परलोक के बारे में सोचेंगे तक नहीं।

इसी प्रकार हम सारा जीवन बिता देंगे। बहुत सारी धन संपत्ति प्राप्त करेंगे। अंत में सब छोड़कर इहलोक से चले जाएंगे। शरीर छोड़ देंगे यानी मर जाएंगे। वापस परलोक में जाएंगे। तब पता चलेगा कि हम परलोक निवास हैं, भूलोक निवासी नहीं। तब पता चलेगा कि अब कुछ नहीं बचा है। सब खत्म हो चुका है। हम दुखी होंगे। अच्छे मौके को व्यर्थ करने के लिए खुद को दोष देंगे। तब कितना भी दुखी होने से कुछ फायदा नहीं होगा। क्योंकि दिया गया मौका खत्म हो चुका होगा। अगले मौके का इंतजार करते रहना पड़ेगा।

ऐसे ही मानव जन्म का निष्क्रमण होता है। जितना भी हासिल करो, सब व्यर्थ हो जाएगा। तुम्हारे साथ कुछ नहीं आएगा। इसलिए कहा जाता है कि **"मृत्यु के**

बाद धन संदूक में रह जाता है। पत्नी चौखट तक साथ देती है। रिश्तेदार, मित्र, कब्रिस्तान तक साथ देते हैं। लेकिन कर्मों का फल ही साथ आता है।"

इसलिए इहलोक में जीते समय "क्या मैं इहलोक निवासी हूँ या परलोक निवासी हूँ?" विषय को अच्छे से निर्धारित कर लेना है। इसमें कोई संदेह नहीं है, सौ फीसद हम सब परलोक निवासी हैं। अगर हम परलोक वासी हैं तो इहलोक में हमें क्या करना है?

क्या करने से परलोक में लाभ प्राप्त होगा? सोचना है। ध्यान साधना करनी है। केवल ध्यान ही है जो आत्मा यानी हमें प्राप्त होता है। उच्च लोक की प्राप्ति कराता है। केवल ध्यान साधना ही नहीं, बल्कि ध्यान बोध भी परलोक के लिए लाभदायक है। ध्यान से संबंधित कार्यक्रम में हिस्सा लेना, सहकार करना, आत्मा से संबंधित किताबें पढ़ना, योगियों से साहचर्य करना, इन सारी चीजों से परलोक में लाभ मिलता है। इसलिए ध्यान कीजिए। ध्यान का महत्त्व जानिए।

ध्यान करने से केवल इहलोक लाभ ही नहीं, बल्कि परलोक लाभ भी प्राप्त होते हैं। जिस तरह परलोक अदृश्य है, इसी तरह ध्यान साधना का परिणाम भी अदृश्य है। चलिए छोटा सा उदाहरण बताते हैं।

किसी देश का नेता होना महान बात है क्योंकि देश का नेता देश के सभी लोगों से महान होता है ना? लेकिन वह नेता इहलोक में परलोक के बारे में ख्याल नहीं कर रहा है। ध्यान भी नहीं कर रहा है। मृत्यु के बाद ऐसे लोग किसी साधारण लोक में पहुंचते हैं। मानिए कि एक मामूली सा रिक्शावाला हर रोज १ घंटे के लिए ध्यान करता है। रिक्शावाला मृत्यु के बाद नेता से उच्च लोक में पहुंचेगा। यानी ध्यान नहीं करने वाला इहलोक का महान व्यक्ति, परलोक में निम्नतर होगा। और इहलोक में ध्यान करने वाला व्यक्ति परलोक में उच्च स्तर पर होगा। यानी "तात्कालिक लोक में महान होने वाला व्यक्ति शाश्वत लोक में निम्न स्तर वाला बन गया है।" लेकिन "तात्कालिक लोक का निम्नतर व्यक्ति शाश्वत लोक का महान व्यक्ति बन गया है"।

इसलिए याद रखिए! **"तात्कालिक लोक में नहीं, बल्कि शाश्वत लोक में महान बनना है!"** हमारा तात्कालिक इहलोक का जीवन हमारे शाश्वत परलोक

के लिए है। सभी को इसे याद रखना है। इसलिए कुछ मिले या ना मिले, दुखी मत होइए। दूसरों के पास मौजूद चीजों को देखकर ईर्ष्या मत महसूस कीजिए। अपने आप से इतना पूछिए कि क्या ध्यान साधना कर पा रहे हैं या नहीं? जानिए कि ध्यान करने वाला महान है। "धन नहीं ध्यान महान है।"

"धन के पीछे नहीं, बल्कि ध्यान के पीछे भागो।" इसलिए धन की प्राप्ति के लिए नहीं, ध्यान की प्राप्ति की कोशिश कीजिए। याद रखिए कि हम सब परलोक निवासी हैं।

ध्यान की पद्धति - श्वास पर ध्यान

हर किसी को अपने लिए उपयुक्त सुखासन में आराम से बैठकर... दोनों हाथों को मिलाकर... आंखों को बंद करके... सहज रूप से होने वाले उछ्वास और निश्वास पर गौर करना है!

बीच में कई सारे विचार हमारे मन में आते रहते हैं, उन सबका खंडन करते हुए... वापस हमारे ध्यान को श्वास पर लाना है... ध्यान भटकता रहेगा लेकिन वापस श्वास पर ध्यान लाते रहना है... धीरे-धीरे... विचार रहित स्थिति प्राप्त होगी... चित्तवृत्ति का निरोध होगा... मन शून्य बन जाएगा। मन शांति प्राप्त करेगा। यही ध्यान स्थिति है। इस विचार रहित स्थिति में प्राप्त होने वाले शारीरिक, तंत्रिका व्यवस्था और आत्मानुभव पर ध्यान देते रहना है। उस स्थिति में असीमित विश्वमय प्राणशक्ति शरीर के अंदर प्रवाहित होकर तंत्रिका व्यवस्था की शुद्धि करती है। इस शक्ति के कारण सारे रोग दूर हो जाते हैं। तंत्रिका व्यवस्था की शुद्धि के कारण सारे कर्म दूर हो जाते हैं।

साधारण रूप से मनुष्य की उम्र जितनी है... कम से कम उतने मिनट तक... हर रोज दिन में दो बार... ध्यान करना है।

“आत्म शांति”

किसी की मृत्यु पर सब लोग इकट्ठा होकर शोक सभा का इंतजाम करके उनकी आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करते हैं। दो मिनट तक मौन रहते हैं। इसके बाद लोग मृत व्यक्ति के प्रति अपनी जिम्मेदारी और धर्म को पूरा मानते हैं। उसके बाद उनको याद नहीं करते हैं। उनके बारे में नहीं सोचते हैं।

एक बार सोचिए मृत की आत्मा की शांति क्यों चाह रहे हैं? क्या आत्मा को शांति की जरूरत है? क्या प्रार्थना करने से शांति प्राप्त होगी या आत्मा शांत नहीं होगी? अगर सच में आत्मा को शांति की जरूरत है तो क्या मरने के बाद शांति की प्रार्थना करने से शांति प्राप्त होगी? आत्मा को शांति प्राप्त नहीं होगी तो क्या होगा? सब लोग मृत्यु के बाद शांति की प्रार्थना क्यों कर रहे हैं? जीवित होने पर आत्मा की शांति के बारे में कोई क्यों नहीं सोचता है? मरने के बाद आत्मा को शांति कैसे मिलती है? इन सारी बातों पर मानव को ध्यान देकर सोचना है। क्या केवल मरने के बाद आत्मा को शांति की जरूरत होती है या जीवित होते समय भी होती है? आत्मा की शांति से प्राप्त होने वाला लाभ क्या है?

सबसे पहले, हर किसी को जानना है कि वह देह नहीं है, वह आत्मा है। आत्मा परलोक से इहलोक आकर शरीर धारण करने वाली है ताकि उस देह से ध्यान साधना करके परलोक से उच्च लोक तक पहुंच सके। पहले वाले स्तर से आगे बढ़ सके। ताकि विकास कर सके। ताकि परलोक में महान बन सके। लेकिन शरीर धारण करके धरती पर आने के बाद इस बात के बारे में मानव भूल जाते हैं। शरीर को स्वयं समझने लगते हैं। हमेशा शरीर के लिए मेहनत करते हैं। यानी शरीर के सुख के लिए, खुशी, आनंद, सेहत को प्राप्त करने की कोशिश करते हैं जिसके कारण संपूर्ण रूप से आत्मा के बारे में भूल जाते हैं। धरती पर आने के कारण को भूल जाते हैं। इतना ही नहीं, शरीर की भूख मिटाने के लिए गलत काम करते हैं। पाप करते हैं। अधर्म का रास्ता चुनते हैं। अपने द्वारा किए गए सारे काम को सही समझते हैं। गलतियाँ करते हुए भी पवित्र होने का ढोंग करते हैं।

ऐसा जीवन बिताते हुए, जिस काम के लिए आए हैं उसी को भूल जाते हैं। आत्मा के विकास के लिए कार्य करना छोड़कर, पापी काम करते हैं। जिसके कारण आत्मा को दुख मिलता है। आत्मा को क्षति प्राप्त होती है। आत्मा को क्षति प्राप्त होने से क्या आत्मा दुखी नहीं होती है? क्या आत्मा शांत रह सकती है?

इस तरह सारे जीवन आत्म शांति प्राप्त नहीं होती है। क्योंकि आत्मा को शांति पहुंचाने वाला कार्य एक भी नहीं करते हैं।

अपना सारा जीवन व्यर्थ करके, मृत्यु के बाद केवल दो मिनट का मौन रखने से क्या आत्मा को शांति प्राप्त होगी? आत्मा को शांति देने के लिए पहले अपने जीवन में आत्मा को महत्त्व देना है। आत्मा को याद रखना है। आत्मा पर श्रद्धा देनी है। शरीर पर श्रद्धा कम करनी है। शरीर का उपयोग आत्मा के लिए करना है।

आत्मा को शांति देने वाले को मोक्ष प्राप्त होगा। 'आत्म शांति' ही मोक्ष है। दस लोग मिलकर एक व्यक्ति के लिए मोक्ष मांगने से मोक्ष नहीं प्राप्त होता है। जीवन भर मेहनत करके प्राप्त करना पड़ता है।

ऐसे मोक्ष को योगियों ने प्राप्त किया है। उन्होंने अपने जीवन और शरीर को आत्मा के लिए खर्च किया है। अंत में आत्म शांति के साथ मोक्ष प्राप्त किया है। लेकिन भोगी ने शरीर को प्रमुख मानकर, आत्मा को नजरअंदाज करके, अपना जीवन दुखित बनाया है। इहलोक और परलोक दोनों में हार हासिल की है।

इसलिए कहा जाता है, **"आत्मा के लिए देह त्याग देने वाले धन्य हैं। लेकिन देह के लिए आत्मा को त्याग देने वाले मूर्ख हैं।"**

आत्मा की शांति और मोक्ष प्राप्त करने के लिए क्या करना है? आत्मा को शांति देने वाला ध्यान बचपन से करना है। 'श्वास पर ध्यान' देना है। केवल ध्यान ही आत्मा को शांति और लाभ दे सकता है। इसलिए जीवित होते समय ध्यान करना है। मरने के बाद आत्मा की शांति के लिए की जाने वाली प्रार्थना व्यर्थ है।

“अमृत किसे मिलेगा?”

सारे देवता श्वासाहारी हैं यानी ध्यान करने वाले हैं। सारे राक्षस मांसाहारी हैं यानी जीव हिंसा करने वाले हैं।

दोनों अमृत के लिए लड़ाई करने लगे। अमृत प्राप्त करके अमर होने के लिए समुद्र का मंथन किया गया। कल्पवृक्ष, कामधेनु, एरावत, लक्ष्मी देवी, ऐसे कई सारे देवता पैदा हुए। अंत में अमृत भी पैदा हुआ। इस तरह अमृत प्राप्त करने के लिए देवता और राक्षस दोनों ने मेहनत की लेकिन भगवान मोहिनी रूप में देवताओं को अमृत प्रदान किया। राक्षसों को नहीं दिया गया। इससे हमें पता लगता है कि भगवान केवल देवताओं पर अनुग्रह करते हैं। दानवों पर नहीं। इतना ही नहीं, भगवान को देवताओं का पक्षपाती कहा जाता है। इसका मुख्य कारण क्या है? राक्षस मांस भक्षक हैं। संसार के जीवों की हिंसा करते हैं। लेकिन देवता अहिंसक हैं। देवता मानव पर उपकार करते हैं। ध्यान निष्ठा यानी श्वास को आहार के रूप में लेते हैं। इसलिए देवताओं ने भगवान का अनुग्रह प्राप्त किया है और अमृत द्वारा अमर बन गए हैं।

लेकिन मांस भक्षक होने वाले राक्षस अमृत प्राप्त नहीं कर पाए हैं जिसकी वजह से उन्हें जन्म मरण के चक्र में फंसना पड़ा है।

हम पुराणों से समझ सकते हैं कि मांस भक्षण करने वाले भगवान का अनुग्रह प्राप्त नहीं कर सकते हैं। उल्टा जन्म मरण के दुखी चक्र में फंस जाते हैं।

भगवद्गीता में कहा गया है,

श्लोक : **तानहं द्विशतः क्रू रान्संसारेषु नराधमान।**

क्षिपाम्यजस्रम शुभानासुरीश्वेव योनिशु।। १६ - १९ ।।

तात्पर्य : “सर्व जीवों के अंदर आत्मस्वरूप में उपस्थित होने वाले मेरी हिंसा करने वाले दुष्ट को जन्म मरण के द्वारा बार-बार घोर संसार में डाल दिया जाएगा और दुष्ट आश्रम के बीच पैदा किया जाएगा।”

श्लोक : **आसुरीं योनिमापन्ना मूढ़ा जन्मनि जन्मनि।**

मायाप्राप्यैव कौन्तेय ततो यन्त्यधमम गतिम।। १६ - २० ।।

तात्पर्य : हे अर्जुन! असुर के पेट में पैदा होने वाले बच्चे हिंसक बनकर पैदा होंगे और मुझे प्राप्त करने का मार्ग जाने बिना हर जन्म में दुखों का सामना करेंगे। बाद में घोर नरक प्राप्त करेंगे।

इस प्रकार साक्षात श्री कृष्ण परमात्मा ने गीता में "जीव हिंसा" के बारे में बताया है।

इससे हमें समझ आता है कि भगवान का अनुग्रह पाने के लिए मांस भक्षण नहीं करना है। देवताओं जैसे ध्यान करना है। उपकार करना है। ऐसा करने वाले लोगों को जन्म-मरण से मुक्त होने का जीवन प्राप्त होगा और वह अमर बनेंगे। शाश्वत रूप से दुख से बाहर निकलेंगे।

इसलिए कहा जाता है, "अमृत से भला आहार नहीं है। ध्यान से भली साधना नहीं है"।

"हिंसा करने वाला राक्षस!
हिंसा छोड़ने वाला मानव!
हंस पकड़ने वाला देवता होता है!"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

"असली मंदिर"

"आलय" का अर्थ रहने का स्थान होता है। "हिम" यानी हिमपात है। हिमपात के स्थान को 'हिमालय' कहते हैं।

भगवान कौन हैं? मूर्ति या आत्मा? गीता में श्री कृष्ण ने स्वयं को आत्मा बताया है। यानी आत्मा भगवान है। इसलिए आत्मा की उपस्थिति जहाँ होती है, वही असली देवालय है। आत्मा देह में होती है इसलिए मानव और जंतु के देह असली आलय हैं। देह में मौजूद आत्मा भगवान है। इसलिए शंकराचार्य जी ने कहा है, "देहो देवालयः प्रोक्तः स जीवः केवलःशिवः।" इसका अर्थ है, 'देह देवालय है, उसमें उपस्थित जीव असली भगवान हैं।" इसलिए सबको याद रखना है कि हर जीव का देह पवित्र देवालय है।

मानव द्वारा पवित्र माने जाने वाले आलय केवल "विग्रह आलय" हैं। यानी वह विग्रह की उपस्थित जगह है। भगवान को मानव नहीं देख सकते हैं क्योंकि भगवान निराकार हैं। इसलिए मानव भगवान के काल्पनिक रूप की कल्पना करके उसकी मूर्ति बनाकर आराधना करते हैं। इसके अलावा कुछ नहीं है। मंदिर में मौजूद मूर्ति भगवान नहीं हैं। वह केवल भगवान की मूर्ति है। **"जहाँ विग्रह होता है, वह विग्रह आलय होता है, जहाँ देव होते हैं, वह देवालय कहलाता है।"**

असली देवालय मानव और जानवर के शरीर हैं। इसलिए देह को पवित्र रखना है। अपवित्र नहीं करना है। किसी के देह पर हिंसा नहीं करनी है। जब तक आत्मा होती है तब तक शरीर पवित्र होता है। आत्मा का मतलब भगवान होता है। ऐसे पवित्र शरीर का नाश करने से उसमें उपस्थित भगवान अपमानित होंगे। यह बहुत बड़ा पाप बन जाएगा। ऐसे शरीर की हिंसा करके, उसे काटकर भक्षण करने से भगवान दुखी होंगे। किसी के शरीर को काटकर विच्छेद करने से भगवान उस शरीर को छोड़कर चले जाएंगे। भगवान को आह्वानित करना है लेकिन भगाना नहीं है। जोर जबरदस्ती करके भगवान को शरीर से बाहर नहीं निकालना है। इसलिए "आत्महत्या महापाप" कहा जाता है।

भगवान पर हमला नहीं कर सकते हैं। इसलिए जोर जबरदस्ती से भगवान को दूर नहीं भेजना है। इसलिए आत्महत्या महापाप है। **"भगवान को हम लेकर नहीं आ सकते हैं। कम से कम भगवान को जबरदस्ती बाहर नहीं भेजना चाहिए।"**

एक बार सोचिए! जानवर को मारना, उनकी हत्या करना, उनकी हिंसा करना कितना पाप है।

एक राम मंदिर के विनाश से और एक बाबरी मस्जिद के विनाश करने से लोग स्वयं को दोषी मानने लगे हैं। सारा देश इधर-उधर हो गया है। हर रोज कितने सारे देवालयों का नाश हो रहा है। जानवरों के शरीर को विच्छेद किया जा रहा है। क्या मानव इसके बारे में नहीं सोचते हैं? इतने क्रूर कार्य के बारे में मानव क्यों नहीं सोच रहे हैं? इतने बड़े पापी कार्य क्यों कर रहे हैं? भगवान को दुनिया से क्यों निकाल रहे हैं? क्या इससे मानव जाति को कोई लाभ पहुंचेगा? नहीं। इसलिए जानवरों की हत्या नहीं करनी चाहिए। धरती पर मौजूद असली देवालय की रक्षा मानव को करनी चाहिए। उन्हें पवित्र रखना है।

देवालय यानी 'देह'। मानव द्वारा पत्थर या मिट्टी से बनाया गया मंदिर नहीं है। भगवान द्वारा अपने निवास के लिए बनाया गया देह ही 'असली देवालय' है। मानव द्वारा निर्मित सारे केवल "विग्रह आलय" हैं।

इस शक्ति को जानने के लिए सभी को ध्यान करना है। तभी देह को पवित्र रख पाएंगे। शराब और मांस से देह को अपवित्र नहीं करना है। जानवरों की हिंसा नहीं करनी है। कम से कम अब तो इस सत्य को ग्रहण कीजिए! ध्यान कीजिए!

"अपने जन्म को हम स्वयं चुनकर आए हैं।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

Note from the Publisher

platform for the mind, body & soul.

Are you looking to share your stories and experiences with the world? We publish a wide range of books on self-help and spirituality.

Visit our website to explore our books
www.mbpublish.com

Also, feel free to get back to us at **contact@mbpublish.com**, with any feedback or suggestions! We would love to hear from you.

Call us on **+91 8447749297** for bulk orders, or if you'd like to publish with us.

/mbpublishinghouse
@mbpublishinghouse

MB Publishing House

'धर्म' का मतलब पुनः एकत्व हैं... यही सारे धर्मों का असली प्रकाश तत्व है। सारे प्राणियों में एकत्व का दर्शन कर सकते हैं... इसी जागरूकता से जीवन बिता सकते हैं। हर धर्म "आत्मशस्त्र" के संपुर्ण सत्य पर आधारित होकर आविर्भाव हुआ है। केवल "आत्मशास्त्र" द्वारा ही हम सब बापस सारे धर्मों के साथ एकता हासिल कर पाएंगे।

इसी प्रकार, हमारे लिए कोई सीमा या परिधि रहीं है इस सत्य को हम आत्मानुभव के साथ ग्रहण कर पाएंगे।

"आत्म तत्व" का अनुभव करने के लिए हमें शाश्वत तत्व से मिलकर रहना हैं। यही असली केंद्र बिंदु हैं।

- ब्रह्मर्षि पत्रीजी

MB
Publishing
House

/mbpublishinghouse
@mbpublishinghouse

Rs.150/-